Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

820
११८VI(१)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
पुस्तकालय

विषय संख्या ४३०
पुस्तक संख्या ११८ V (१)
आगत पञ्जिका संख्या ४१,४८२

पुस्तक पर सर्व प्रकार की निशानियां लगाना वर्जित है। कृपया १५ दिन से अधिक समय तक पुस्तक अपने पास न रखें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्टाक प्रमाणीकरण १९८४-१९८५

COMPILED

430,118V(1)

41492

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CHECKED 1975
Initial

अथ वेदाङ्गप्रकाशः

तत्रत्यः ।

पञ्चमो भागः ।

॥ सामासिकः ॥

LIBRARY GURUKULA KANGRI VIDYALAYA

॥ पाणिनिमुनिप्रणीतायामष्टाध्याय्यां ॥

चतुर्थो भागः ॥

श्रीमत्स्वामिदयानन्दसरस्वतीकृतव्याख्यासहितः ॥

पठनपाठनव्यवस्थायां सप्तमम्पुस्तकम्

अजमेरनगरे वैदिकयन्त्रालये

मुद्रितम् ॥

इस पुस्तक के छापने का अधिकार किसी को नहीं है ॥

क्योंकि

इस की रजिस्टरी कराई गई है ॥

—— :o✱o: ——

तृतीयवार १००० } संवत् १९६५ { मूल्य ।) डाकव्यय)॥

वैदिक यंत्रालय, अजमेर.

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः
पुस्तक सं० ...4630...
आगत सं० ...११८५...(६)
...४१,४८.२...
गुरुकुल ग्रन्थालय काँगड़ी.

विज्ञापन ॥

इस यन्त्रालय में सर्व प्रकार की संस्कृत, आर्य्यभाषा, अंग्रेज़ी उर्दू की छपाई उत्तम और सस्ती होती है. इस में अनेक प्रकार के बोम्बे तथा कलकत्ते के टाइप, बेल व चित्र प्रत्येक समय उपस्थित रहते हैं, इसमें महर्षि के ग्रन्थों के अतिरिक्त अन्य प्रत्येक प्रकार के ग्रन्थ भी छपते हैं, नक्शों का काम भी उत्तमतया होता है, सुप्रबन्ध के होने से सब बाहर की छपाई नियत समय पर निकालने का प्रयत्न किया जाता है. जिल्दसाजी का भी प्रबन्ध उत्तम है ।

प्रबन्धकर्त्ता

वैदिक यन्त्रालय, अजमेर ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

430,118V(1)
41492

॥ ओ३म् ॥

अथ सामासिकः ॥

अथ सामासिकः* प्रारभ्यते । तत्र समासाश्चत्वारः । प्रथमोऽव्ययीभावः । द्वितीयस्तत्पुरुषः । तृतीयो बहुव्रीहिः । चतुर्थश्च द्वन्द्वः ॥

समर्थः पदविधिः † । २ । १ । १ ॥

‡ समर्थपदयोरयं विधिशब्देन सर्वविभक्त्यन्तः समासः । समर्थस्य विधिः । समर्थविधिः । समर्थयोर्विधिः । समर्थविधिः । समर्थानां विधिः । समर्थविधिः । समर्थाद् विधिः । समर्थविधिः । समर्थे विधिः । समर्थविधिः । पदस्य विधिः । पदविधिः । पदयोर्विधिः । पदविधिः । पदानां विधिः । पदविधिः । पदाद् विधिः । पदविधिः । पदे विधिः । पदविधिः । समर्थविधिश्च समर्थविधिश्च समर्थविधिश्च समर्थविधिश्च समर्थविधयः । पदविधिश्च पदविधिश्च पदविधिश्च पदविधिश्च पदविधयः । समर्थविधयश्च पदविधयश्च । समर्थःपदविधिः । पूर्वः समास उत्तरपदलोपी याद्दच्छिकी च विभक्तिः । सामर्थ्यं द्विविधम् । एकार्थीभावः व्यपेक्षा च ॥

यह महाभाष्य का वचन है । जिस में भिन्न २ पदों का एकपद अनेक स्वरों का एकस्वर, अनेक विभक्तियों की एक विभक्ति हो जाती हैं उस को एकार्थीभाव और

---

* समासानां व्याख्यानो ग्रन्थः सामासिकः । जिस ग्रन्थ में समासों की व्याख्या हो उस का नाम सामासिक है ।

† यह सूत्र एक पद और अनेक पदों के सम्बन्ध में साधुत्व विधायक है ।

‡ जो यह आगे व्याख्या लिखी जाती है वह सब महाभाष्य की है ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकपद का अनेक पदों के साथ सम्बन्ध होने को व्यपेक्षा कहते हैं । सो प्रत्ययविधान में और पराङ्गवद्भाव में भी जाननी चाहिये । समास का प्रयोजन यह है कि अनेक पदों का एक पद अनेक विभक्तियों की एक विभक्ति और अनेक स्वरों का एक स्वर होना । "वृत्तिस्तर्हि कस्मान्न भवति महत्कष्टं श्रित इति । सविशेषणानां वृत्तिर्न वृत्तस्य वा विशेषणन्न प्रयुज्यत इति" यहां महत् शब्द विशेषण और कष्ट विशेष्य है । फिर विशेषण सहित जो कष्ट है सो श्रित के साथ समास को प्राप्त नहीं होता और जो समास भी कर लें तो भी कष्ट का श्रित के साथ विशेषण का योग नहीं हो सकता । यहां वृत्ति नाम समास का है । इस के उदाहरण तथा प्रत्युदाहरण इस सूत्र के आगे कहेंगे ॥

सुबामन्त्रिते पराङ्गवत् स्वरे ॥ २ । १ । २ ॥

जो आमन्त्रित पद परे हो तो पूर्व सुबन्त को पराङ्गवद्भाव स्वरविधि करने में होवे । अर्थात् आमन्त्रित पद का जो स्वर है वही पूर्व सुबन्त का स्वर हो जावे । संबोधन पद के परे सुबन्त पूर्व पद के स्थान में पराङ्गवत् अर्थात् संबोधन पद का जो स्वर है वही स्वर हो जाता है । कुण्डेनाटन् । परशुना वृश्चन् । मद्राणां राजन् । कश्मीराणां राजन् । मगधानां राजन् । सुबिति किम् । पीड्ये पीड्यमान । आमन्त्रित इति किम् । गेहे गार्ग्यः । परग्रहणं किम् । पूर्वस्य माभूत् । देवदत्तस्य कुण्डेनाटन् । स्वर इति किम् । कूपे सिञ्चन् । चर्मे नमन् ॥

वा०—षत्वणत्वे प्रति पराङ्गवन्न भवति । वा०-सुबन्तस्य पराङ्गवद्भावे समानाधिकरणस्योपसंख्यानमनन्तरत्वात् ॥

जैसे—तीक्ष्णया सूच्या सीव्यन् । तीक्ष्णेन परशुना वृश्चन् ॥

वा०—अव्ययानां प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥

उच्चैरधीयान । नीचैरधीयान ॥

प्राक् कडारात् समासः ॥ २ । १ । ३ ॥

जो इस सूत्र से आगे (कडाराः कर्मधारये) यह सूत्र है वहां तक समास का अधिकार जानना योग्य है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सह सुपा ॥ २ । १ । ४ ॥

सह ग्रहणं योगविभागार्थम् । सह सुप् समस्यते केन सह । समर्थेन । अनुव्यचलत् । अनुविशत् । ततः सुपा च सह सुप् समस्यते । उदाहरणम् । अजाकृपाणीयम् । पुनरुत्स्यूतम् । वासो देयं न पुनर्निष्कृतोरथः । अधिकारश्च लक्षणं च यस्य समासस्यान्यल्लक्षणं नास्ति इदं तस्य लक्षणं भविष्यति । ऐसा जानना कि जिसका लक्षण कोई सूत्र न होवे उस समास की सिद्धि करनेवाला यह सूत्र है । यहां से आगे तीन पद का अधिकार है । सो ये हैं :—सह । सुप् और पासु ॥

वा०-इवेन सह समासो विभक्त्यलोपः पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वञ्च वक्तव्यम् ॥

जैसे—वाससी इव । कन्ये इव ॥

अव्ययीभावः ॥ २ । १ । ५ ॥

यहां से आगे जो समास कहेंगे उस की अव्यय संज्ञा जानना चाहिये । पूर्वपदार्थप्रधानोऽव्ययीभावः । अव्ययीभावसमास में पूर्वपद का अर्थ प्रधान होता है ॥

अव्ययं विभक्तिसमीपसमृद्धिव्यृद्ध्यर्थाभावात्ययाऽसम्प्रतिशब्दप्रादुर्भावपश्चाद्यथाऽऽनुपूर्व्ययौगपद्यसादृश्यसंपत्तिसाकल्यान्तवचनेषु ॥ २ । १ । ६ ॥

विभक्ति से लेके अन्त शब्द पर्यन्त १६ (सोलह) अर्थ हैं उन में वर्त्तमान जो अव्यय हैं सो सुबन्त के साथ समास पावें वह अव्ययीभाव संज्ञक हों । "विभक्तिवचने तावत्" वचन शब्द का विभक्ति आदि सब के साथ योग जानना (विभक्ति) स्त्रीष्वधिकृत्य कथा प्रवर्त्तते । अधिस्त्रि * अधिकुमारि ।

ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य ॥ १ । २ । ४७ ॥

जो नपुंसक लिङ्ग अर्थ में वर्त्तमान प्रातिपदिक हो तो उसके अच् को ह्रस्व हो । अतिरि कुलम् । अधिस्त्रि इत्यादि । नपुंसक इति किम् । ग्रामणीः । सेनानीः । प्रातिपदिकस्येति किमर्थम् । काण्डे तिष्ठतः । कुड्ये तिष्ठतः ॥

---

* "अव्ययीभावश्च" इस सूत्र से यहां नपुंसक लिङ्ग होता है । और "अव्ययादाप्सुपः" इस सूत्र से यहां सुप् का लुक् होता है ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०—समीपवचने ॥

कुम्भस्य समीपम् । उपकुम्भम् । उपमणिकम् । उपशालम् ॥

नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः ॥ २ । ४ । ८३ ॥

अदन्त अव्ययीभाव समास से सुप् का लुक् न हो किन्तु उस को अम् आदेश होजाय पञ्चमी को वर्ज्जके । जैसे—उपराजम् । अधिराजम् । अनश्चेति टच् । उपमणिकं तिष्ठति । उपमणिकं पश्य । उपकुम्भं पश्यति । अपञ्चम्या इति किम् । उपकुम्भादानय ॥

तृतीयासप्तम्योर्बहुलम् ॥ २ । ४ । ८४ ॥

अदन्त अव्ययीभाव से तृतीया और सप्तमी को अम् आदेश बहुल करके हो अर्थात् पक्ष में लुक् हो । जैसे—उपकुम्भं कृतम् । उपकुम्भेन कृतम् । उपकुम्भं निधेहि । उपकुम्भे निधेहि ॥ (समृद्धि) मद्राणां समृद्धिः सुमद्रम् । सुमगधं वर्त्तते । (व्यृद्धि) ऋद्धि का न होना "गवादिकानामृद्धेरभावः" दुर्गवदिकम् । दुर्यवनम् वर्त्तते (अर्थाभाव) वस्तु का अभाव । मक्षिकाणामभावो निर्मक्षिकम् । निर्मशकम् वर्त्तते (अत्ययः) नाशः । अतीतानि हिमानि यं समयं निर्हिमम् । निःशीतं वर्त्तते (असंप्रति) अर्थात् इस समय न हो । संप्रति तुन्नास्ति । अतिक्षुधम् । अतितैसृकम् (शब्दप्रादुर्भाव) शब्द का प्रकाश होना । रथानां पश्चात् अनुरथं पादातम् । योग्यता । वीप्सा । पदार्थानतिवृत्तिः । सादृश्यं चेति यथार्थाः । अनुरूपं । यह रूप के योग्य है । अर्थमर्थम्प्रतीति प्रत्यर्थम् । पदार्थानतिवृत्तिः । यथाशक्ति । यथाबलमित्यादि (आनुपूर्व्यम्) अनुक्रमम् । अनुज्येष्ठं प्रविशन्तु भवन्तः (यौगपद्य) एककालं सचक्रं धहि युगपच्चक्रं धेहीत्यर्थः (सादृश्य) नाम समान । काले समानम् । सदृशः सख्याः । ससखि (संपत्तिः) अर्थात् अच्छे प्रकार प्राप्ति । ब्रह्मणः संपत्तिः सब्रह्म । सधनम् देवदत्तस्य (साकल्य) नाम सब । तुषेण सह भुङ्क्ते सतुषम् । सबुसम् (अन्तवचन)

ग्रन्थान्ताधिके च । ६ । ३ । ७६ ॥

जो ग्रन्थ उत्तर पद परे हो तो ग्रन्थान्त में तथा अधिक अर्थ में वर्त्तमान जो सह शब्द है उस को स आदेश हो । सज्योतिषमधीते । समुहूर्तम् । ससंग्रहं व्याकरणमधीते । अधिके । सद्रोणा खारी । समाषः कार्षापणः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ सामासिकभूमिका ॥

समास उसे कहते हैं कि जिस में अनेक पदों को एकपद में जोड़ देना होता है। जब अनेक पद मिल के एक पद हो जाता है तब एक पद और एक स्वर होते हैं, पर समास विद्या के जाने विना कुछ विदित नहीं हो सकता। इसलिये समास विद्या अवश्य जाननी चाहिये ॥

समास चार प्रकार का होता है ॥

एक अव्ययीभाव, दूसरा तत्पुरुष, तीसरा बहुव्रीहि और चौथा द्वन्द्व। अव्ययीभाव में पूर्वपदार्थ, तत्पुरुष में उत्तरपदार्थ, बहुव्रीहि में अन्य पदार्थ और द्वन्द्व में उभय अर्थात् सब पदों के अर्थ प्रधान रहते हैं। जिसका अर्थ मुख्य हो वही प्रधान कहाता है।

अव्ययीभाव के दो भेद होते हैं ॥

एक पूर्वपदाव्ययीभाव दूसरा उत्तरपदाव्ययीभाव ॥

तत्पुरुष नव प्रकार का होता है ॥

द्वितीया तत्पुरुष। तृतीया तत्पुरुष। चतुर्थी त०। पञ्चमी त०। षष्ठी त०। सप्तमी त०। द्विगु नञ् और कर्मधारय ॥

बहुव्रीहि दो प्रकार का है ॥

एक तद्गुणसंविज्ञान दूसरा अतद्गुणसंविज्ञान ॥

द्वन्द्व भी तीन प्रकार का होता है ॥

एक इतरेतरयोग दूसरा समाहार और तीसरा एकशेष। इस प्रकार से ४ समासों के १६ (सोलह) भेद समझने योग्य हैं। और इन में से अव्ययीभाव, तत्पुरुष और बहुव्रीहि लुक् और अलुक् भेद से दो २ प्रकार के होते हैं। इन के उदाहरण आगे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवेंगे इन समासों को यथार्थ जानने से सर्वत्र मिले हुए पद पदार्थ और वाक्यार्थ जानने में अतिसुगमता होती है और समस्तपदयुक्त संस्कृत बोलना तथा दूसरे का कहा समझ भी सकता है यह भी व्याकरण विद्या की अवयव विद्या है जैसी कि संधि-विषय और नामिक विद्या लिख आये। यहां जो पठन पाठन के लिये एक उदाहरण वा प्रत्युदाहरण लिखा है इसे देख इसके समान अन्य उदाहरण वा प्रत्युदाहरण भी ऊपर से पढ़ने पढ़ाने चाहियें। इसके आगे प्रकृत जो कुछ लिखा जाता है वह सब (समर्थः पदविधिः) इस सूत्र के भाष्यस्थ वचन हैं। जिस को जानने की इच्छा हो वह उक्त सूत्र के महाभाष्य में देख लेवे (सापेक्षमसमर्थं भवतीति) जो एक पद के साथ अपेक्षा करके युक्त हो वह समर्थ होता है और जो अनेक पदों के साथ आकर्षित होता है वह प्रायः समास के योग्य नहीं होता। जो सापेक्ष असमर्थ होता है ऐसा कहा जावे तो राजपुरुषो दर्शनीयः। यहां वृत्ति प्रसक्त न होगी यह दोष नहीं, यहां प्रधान सापेक्ष है क्योंकि प्रधान सापेक्ष का भी समास होता है और जहां प्रधान सापेक्ष है वहां वृत्ति अर्थात् समास होगा। उदाहरणम्। देवदत्तस्य गुरुकुलम्। यह दोष नहीं। यहां षष्ठी समुदाय गुरुकुल की अपेक्षा करती है। जहां षष्ठी समुदाय की अपेक्षा नहीं करती वहां समास भी नहीं होता। किमोदनः शालीनाम्। यह कौन शाली अर्थात् चावलों का ओदन है ऐसे अर्थ में तण्डुलमात्र की अपेक्षा करके यह षष्ठी नहीं है। इसलिये यह समुदाय अपेक्षा नहीं। इत्यादिक स्थलों में समास नहीं होता। समास समर्थों का होता है। समर्थ किसको कहते हैं। पृथक् २ अर्थवाले पदों के एकार्थीभाव को। यहां अगले वाक्यों में पृथक् २ अर्थवाले पद हैं। जैसे—राज्ञः पुरुषः इस वाक्य में राज्ञः और पुरुषः ये दोनों पद अपने २ अर्थ के प्रतिपादन करने में समर्थ हैं। और समास होने से इनका एकार्थीभाव हो जाता है। यथा—राजपुरुष इत्यादि प्रयोगों में समासकृत क्या विशेष है। विभक्ति का लोप अव्यवधान यथेष्ट परस्पर सम्बन्ध एकस्वर एकपद और एकविभक्ति रहती है। एकार्थीभाव पक्ष में समर्थ पद का अर्थ—संगतार्थः समर्थः संसृष्टार्थः समर्थ इति। और जैसे संसृष्टार्थ है जैसे—संगतं घृतम् ऐसा कहने से मिला

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ विदित होता है । और जैसे संसृष्टोऽग्निरिति । ऐसा कहने से भी उक्तही अर्थ विदित होता है और जहां व्यपेक्षा सामर्थ्य होता है, वहां संप्रेक्षितार्थः समर्थः और संबद्धार्थः समर्थ इति यहां अनेक पदों का सम्बन्धमात्र प्रयोजन है इस व्यपेक्षा में अनेक पद अनेकस्वर अनेक विभक्ति वर्त्तमान रहती हैं ॥

वा०—स विशेषणानां वृत्तिर्न वृत्तस्य वा विशेषणं न प्रयुज्यत इति वक्तव्यम् ॥

अनेक विशेषण युक्त विशेष्य का समास और समस्त का विशेषण के साथ योग नहीं होता । सविशेषण जैसे ऋद्धस्य राज्ञः पुरुषः यहां राजा का विशेषण ऋद्ध होने से पुरुष के साथ राजन् शब्द का समास नहीं होता (वृत्त) राजपुरुषः इस समस्त राजन् शब्द के साथ ऋद्ध विशेषण का योग भी नहीं हो सकता * इसलिये समास विद्या को समझ लेना सब मनुष्यों को अत्यन्त उचित है ॥

इति भूमिका ॥

---

* अर्थात् वही असमर्थ होता है कि जिस का सम्बन्ध अनेक पदों के साथ हो जैसे राजन् शब्द का सम्बन्ध ऋद्ध और पुरुष के साथ होने से समास न हुआ वैसे सर्वत्र समझना चाहिये और जहां प्रधान की अपेक्षा हो वहां तो सविशेषण और वृत्त का भी विशेषण के साथ योग होता है जैसे देवदत्तस्य गुरुकुलम् यहां गुरु प्रधान है । इसलिये कुल के साथ समास और देवदत्त का सम्बन्ध भी हो गया ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अव्ययीभावे चाकाले ॥ ६ । ३ । ८२ ॥

अव्ययीभाव समास में कालवाची भिन्न उत्तरपद परे हो तो सह को स आदेश हो । सचक्रम् । सत्रुसम् । अकाल इति किम् । सह पूर्वाह्णम् । सभाष्यम् । साग्न्यधीते ॥

यथा सादृश्ये ॥ २ । १ । ७ ॥

जो सादृश्य भिन्न अर्थ में अव्यय सो सुबन्त के संग समास को प्राप्त हो सो समास अव्ययीभावसंज्ञक हो । यथा वृद्धं ब्राह्मणानामन्त्रयस्व । ये ये वृद्धाः यथावृद्धम् । यथाऽध्यापकम् । असादृश्य इति किम् । यथा देवदत्तस्तथा यज्ञदत्तः ॥

यावदवधारणे ॥ २ । १ । ८ ॥

जो अवधारण अर्थ में वर्त्तमान अव्यय सो सुबन्त के संग समास पावे । यावदमत्रं ब्राह्मणानामन्त्रयस्व । यावन्त्यमत्राणि संभवन्ति पञ्च षड् वा तावत आमन्त्रयस्व । अवधारण इति किम् । यावद्दत्तं तावद्भुक्तम् । नावधारयामि कियन्मया भुक्तमिति ॥

सुप्प्रतिना मात्रार्थे ॥ २ । १ । ९ ॥

मात्रा विन्दुः स्तोकमल्पमिति पर्यायाः । जो मात्रार्थ में वर्त्तमान प्रति उसके साथ सुबन्त समास पावे सो अव्ययीभावसंज्ञक हो । अस्त्यत्र किञ्चिच्छाकम् । शाकप्रति । सूपप्रति । ओदनप्रति । मात्रार्थ इति किम् । वृक्षं प्रति विद्योतते विद्युत् । सुबिति वर्त्तमाने पुनः सुब्ग्रहणमव्ययनिवृत्त्यर्थम् ॥

अक्षशलाकासंख्याः परिणा ॥ २ । १ । १० ॥

जो अक्ष शलाका और संख्यावाची शब्द एक, द्वि, त्रि इत्यादि परि के साथ समास को प्राप्त हों वह अव्ययीभावसंज्ञक समास है । अक्षेण परिक्रीडन्त इति अक्षपरि । शलाकापरि । एकपरि । द्विपरि । त्रिपरि ।

वा०—अक्षशलाकयोश्चैकवचनान्तयोरिति वक्तव्यम् ॥

इह माभूत् अक्षाभ्यां वृत्तमक्षैर्वृत्तम् ।

वा०—कितवव्यवहार इति वक्तव्यम् ॥

इह माभूत् । अक्षेणेदं न तथा वृत्तं शकटेन तथा पूर्वमिति ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभाषा ॥ २ । १ । ११ ॥

अधिकार । इसके आगे जो २ समास कहेंगे सो २ विभाषा करके होंगे अर्थात् पक्ष में विग्रह भी रहेगा जहां २ वि॰ ऐसा संकेत करें वहां २ विकल्प जानना ॥

अपपरिबहिरञ्चवः पञ्चम्या ॥ २ । १ । १२ ॥

जो अप, परि, बहिस् और अञ्चु का सुबन्त के साथ समास विकल्प करके होता है वह अव्ययीभाव कहाता है । जैसे वि॰ अपत्रिगर्त्तं वृष्टो देवः । अपत्रिगर्तेभ्यो वा । ग्रामाद्बहिर्बहिर्ग्रामम् । बहिर्ग्रामात् । बहिश्शब्दयोगे पञ्चमीभावस्यैतदेव ज्ञापकम् ॥

आङ्मर्यादाभिविध्योः ॥ २ । १ । १३ ॥

जो मर्यादा और अभिविधि अर्थ में आङ् पञ्चम्यन्त सुबन्त के सङ्ग वि॰ समास को प्राप्त होता है सो समास अव्ययीभावसंज्ञक होवे । आपाटलि पुत्रं वृष्टोदेवः । आपाटलि पुत्रात् । अभिविधि । आकुमारं यशः पाणिनेः । आकुमारेभ्यः ॥

लक्षणेनाभिप्रती आभिमुख्ये ॥ २ । १ । १४ ॥

जो आभिमुख्य अर्थ हो तो लक्षण अर्थात् चिह्नवाची सुबन्त के साथ अभि और प्रति वि॰ समास को प्राप्त हों वह अव्ययीभावसंज्ञक हो । जैसे—अभ्यग्नि शलभाः पतन्ति । अग्निमभि । प्रत्यग्नि । अग्निं प्रति । आभिमुख्ये किम् । देशं प्रति गतः ।

अनुर्यत्समया ॥ २ । १ । १५ ॥

समया नाम समीपता । जिस के समीप को अनु कहता हो उसी लक्षणवाची सुबन्त के साथ वि॰ समास पावे सो अव्ययीभावसंज्ञक हो । जैसे—अनुवनमशनिर्गतः । अनुवृक्षम् । अनुरिति किम् । वनं समया । यत्समयेति किम् । वृक्षमनुविद्योतते विद्युत् ।

यस्य चायामः ॥ २ । १ । १६ ॥

आयामो दैर्घ्यम् । जिस के लम्बेपन को अनु कहता हो उसी लक्षणवाची सुबन्त के सङ्ग वि॰ समास पावे सो अव्ययीभावसंज्ञक हो । अनुगङ्गं वाराणसी । अनुयमुनम्मथुरा । यमुनाऽऽयामेन मथुराऽऽयामो लक्ष्यते । आयाम इति किम् । वृक्षमनुविद्योतते विद्युत् ॥

तिष्ठद्गुप्रभृतीनि च ॥ २ । १ । १७ ॥

जो तिष्ठद्गु आदि शब्द निपातन किये हैं वे अव्ययीभावसंज्ञक हों । तिष्ठद्गु

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालविशेषः। जैसे—तिष्ठन्ति गावो यस्मिन् काले दोहनाय, स तिष्ठद्गु कालः। वहद्गु। आयतीगवम्।

वा०—खलेयवादीनि प्रथमान्तान्यन्यपदार्थे समस्यन्त इति वक्तव्यम्।

जैसे—खलेबुसम्। खलेयवम्। लूनयवम्। लूयमानयवम्। पूतयवम्। संहृतबुसम्। संह्रियमाणबुसम्। एते कालशब्दाः। समभूमि। समपदाति सुषमम्। विषमम्। निष्षमम्। दुष्षमम्। अपसमम्। प्राह्णम्। प्ररथम्। प्रमृगम्। प्रदक्षिणम्। अपरदक्षिणम्। संप्रति। असंप्रति। पापसमम्। पुण्यसमम्॥

वा०—इच् कर्मव्यतिहारे॥

दण्डादण्डि। मुसलामुसलि। नखानखि॥

पारे मध्ये षष्ठ्या वा॥ २। १। १८॥

जो पार और मध्य शब्द षष्ठ्यन्त सुबन्त के सङ्ग वि० समास पावें सो समास अव्ययीभावसंज्ञक हो। और एकारान्त निपातन भी किया है। जैसे—पारं गङ्गायाः। पारे गङ्गम्। मध्यं गङ्गायाः। मध्येगङ्गम्। षष्ठीसमास पक्ष। गङ्गापारम्। गङ्गामध्यम्। यहां फिर (वा) ग्रहण का प्रयोजन यह है कि पक्ष में षष्ठी समास हो के वाक्य भी रह जावे। जैसे गङ्गायाः पारम्। गङ्गाया मध्यम्॥

संख्या वंश्येन॥ २। १। १९॥

जो वंश्यवाची सुबन्त के साथ संख्यावाची सुबन्त वि० समास पावे सो अव्ययीभावसंज्ञक हो। जैसे—द्वौ मुनि व्याकरणस्य वंश्यौ। द्विमुनि व्याकरणस्य*। त्रिमुनि व्याकरणस्य †॥

नदीभिश्च॥ २। १। २०॥

जो संख्यावाची सुबन्त नदीवाची सुबन्तों के साथ समास को प्राप्त त्रि० होवें सो०। जैसे सप्तगङ्गम्। द्वियमुनम्। पञ्चनदम्। सप्तगोदावरम्॥

अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः॥ ५। ४। १०७॥

---

* दो मुनि अर्थात् पाणिनि और पतञ्जलि।

† तीन मुनि अर्थात् पाणिनि, पतञ्जलि और शाकटायन।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अव्ययीभाव समास में शरत आदि प्रातिपदिकों से टच् प्रत्यय होवे । जैसे:—
शरदः समीपम् उपशरदम् । प्रतिशरदम् । उपविपाशम् । प्रतिविपाशम् । अव्ययीभाव इति किम् । परमशरत् ॥

अनश्च ॥ ५ । ४ । १०८ ॥

अन् जिस के अन्त में हो उस सुबन्त से समासान्त टच् प्रत्यय हो । जैसे—राज्ञः समीपं । उपराजम् । आत्मनि अधि इति अध्यात्मम् । प्रत्यात्मम् ॥

नपुंसकादन्यतरस्याम् ॥ ५ । ४ । १०९ ॥

अन्नन्त नपुंसक सुबन्त से अव्ययीभाव समास में समासान्त टच् प्रत्यय वि० हो चर्म चर्म प्रति इति प्रतिचर्मम् । प्रतिचर्म । उपचर्मम् । उपचर्म ॥

नदीपौर्णमास्याग्रहायणीभ्यः ॥ ५ । ४ । ११० ॥

नदी, पौर्णमासी, आग्रहायणी ये तीन प्रातिपदिक जिनके अन्त में हों उन समस्त समुदायों से अव्ययीभाव समास में समासान्त टच् प्रत्यय वि० हो । जैसे—नद्याः समीपं । उपनदम् । उपनदि । उपपौर्णमासम् । उपपौर्णमासि । उपाग्रहायणम् । उपाग्रहायणि ।

झयः ॥ ५ । ४ । १११ ॥

झय् प्रत्याहार जिस के अन्त में हो उस सुबन्त से अव्ययीभाव समास में समासान्त टच् प्रत्यय वि० हो । जैसे—उपसमिधम् । उपसमित् । उपदृषदम् । उपदृषत् । अतिक्षुधम् । अतिक्षुत् ॥

गिरेश्च सेनकस्य ५ । ४ । ११२ ॥

सेनक आचार्य के मत में गिरि शब्दान्त प्रातिपदिक से अव्ययीभाव समास में समासान्त टच् प्रत्यय वि० हो । जैसे—अंतर्गिरम् । अन्तर्गिरि । उपगिरम् । उपगिरि । अव्ययीभाव समास में इतने समासान्त प्रत्यय होते हैं ॥

अन्यपदार्थे च संज्ञायाम् ॥ २ । १ । २१ ॥

जो संज्ञा हो तो अन्यपदार्थ में वर्तमान जो सुबन्त सो नदीवाची सुबन्त के साथ समास पावे । जैसे—उन्मत्तगङ्गं नाम देशः । लोहितगङ्गं नाम देशः । कृष्णगङ्गं नाम देशः । शनैर्गङ्गं नाम देशः । अन्यपदार्थ इति किम् । कृष्णवेणी । संज्ञायामिति किम् । शीघ्रगङ्गो देशः ॥ इत्यव्ययीभावः समासः समाप्तः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ तत्पुरुषः ॥

तत्पुरुषः ॥ २ । १ । २२ ॥

यहां से लेके बहुव्रीहि समास से पूर्व २ तत्पुरुष समास का अधिकार है ॥

उत्तरपदार्थप्रधा नस्तत्पुरुषः ॥

तत्पुरुष समास में उत्तरपद का अर्थ प्रधान होता है ॥

द्विगुश्च ॥ २ ।१ । २३ ॥

द्विगु समास भी तत्पुरुष संज्ञक होता है "द्विगोस्तत्पुरुषत्व समासान्ताः प्रयोजनम्" ॥

समासान्ताः ॥ ५ । ४ । ६८ ॥

अब जो प्रत्यय कहेंगे वे समासान्त होंगे अर्थात् उन का समास के ही साथ ग्रहण किया जायगा । जैसे--पञ्चराजी । दशराजी । पञ्चराजम् । दशराजम् । द्व्यहः । त्र्यहः । पञ्चगवम् । दशगवम् ॥

गोरतद्धितलुकि ॥ ५ । ४ । ९२ ॥

तद्धितलुक् को वर्ज के गो शब्दान्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय हो । जैसे—परमगवः। उत्तमगवः । पञ्चगवम् । दशगवम् । अतद्धितलुकीति किम् । पञ्चभिर्गोभिः क्रीतः । पञ्चगुः । दशगुः । तद्धितग्रहणेन ।किम् ।सुब्लुकि प्रतिषेधो माभूत् । जैसे—राजगवमिच्छति । राजगवीयति । लुग्ग्रहणात्किम् । तद्धित एव माभूत् । पञ्चभ्यो गोभ्य आगतं पञ्चगवरूप्यम् । पञ्चगवमयम् ॥

ऋक्पूरब्धूः पथामानक्षे ॥ ५ । ४ । ७४ ॥

जो अक्ष सम्बन्धी अर्थ न हो तो ऋक्, पुर्, अप्, धुर्, और पथिन् ये जिन के अन्त में हों उन प्रातिपदिकों से समासान्त अकार प्रत्यय हो । जैसे—अविद्यमाना ऋक् यस्मिन्सोऽनृचो ब्राह्मणः । बह्वृचः । ब्राह्मणपुरम् । नान्दीपुरम् । द्विर्गता आपो यस्मिन् तद् द्वीपम् । अन्तरीपम् । समीपम् । राज्ञान्धूः । राजधुरा । महापुरा । देवपथः । जलपथः । अनक्ष इति किम् । अक्षस्य धूः । अक्षधूः । दृढधूरक्षः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच् प्रत्यन्ववपूर्वात् सामलोम्नः ॥ ५ । ४ । ७५ ॥

जो प्रति, अनु और अव पूर्वक सामन् और लोमन् प्रातिपदिक हों तो उन से समासान्त अच् प्रत्यय हो। प्रतिसामम्। अनुसामम्। अवसामम्। प्रतिलोमम् अनुलोमम्। अवलोमम् ॥

अक्ष्णोऽदर्शनात् ॥ ५ । ४ । ७६ ॥

दर्शन भिन्न अर्थ में अक्षि शब्द से समासान्त अच् प्रत्यय हो। जैसे—पुष्कराक्षम्। उदुम्बराक्षः। अदर्शनादिति किम्। ब्राह्मणाक्षि ॥

ब्रह्महस्तिभ्यां वर्चसः ॥ ५ । ४ । ७८ ॥

ब्रह्मन् और हस्तिन् शब्द से परे जो वर्चस् उस से समासान्त अच् प्रत्यय हो। जैसे—ब्रह्मणो वर्चः। ब्रह्मवर्चसम्। हस्तिनो वर्चः। हस्तिवर्चसम् ॥

वा०—पल्यराजभ्यां चेति वक्तव्यम् ॥

पल्लयवर्चसम्। राजवर्चसम् ॥

अवसमन्धेभ्यस्तमसः ॥ ५ । ४ । ७९ ॥

अव, सम् और अन्ध शब्द से परे जो तमस् उस से समासान्त अच् प्रत्यय हो। जैसे—अवगतं नाम प्राप्तं तमः। अवतमसम्। सम्यक्तमः। सन्तमसम्। अन्धन्तमः। अन्धतमसम्।

श्वसो वसीयः श्रेयसः ॥ ५ । ४ । ८० ॥

जो श्वस् शब्द से परे वसीयस् और श्रेयस् शब्द हों तो उन में समासान्त अच् प्रत्यय हों। श्वोवसीयसम्। श्वःश्रेयसम् ॥

अन्ववतप्ताद्रहसः ॥ ५ । ४ । ८१ ॥

अनुरहसम्। अवरहसम्। तप्तरहसम् ॥

प्रतेरुरसः सप्तमीस्थात् ॥ ५ । ४ । ८२ ॥

जो प्रति से परे सप्तमीस्थ उरस् उस से समासान्त अच् प्रत्यय हो, जैसे—उरसि प्रति। प्रत्युरसम्। सप्तमीस्थादिति किम्। प्रतिगतमुरः। प्रत्युरः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुगवमायामे ॥ ५ । ४ । ८३ ॥

यहां आयाम अर्थ में अनुगव अच् प्रत्ययान्त निपातन किया है । गोरनु । अनुगवम् यानम् । आयाम इति किम् । गवां पश्चादनुगु ॥

द्विस्तावा त्रिस्तावा वेदिः ॥ ५ । ४ । ८४ ॥

जो वेदी के प्रमाण से अधिक द्विगुण वा त्रिगुण वेदी हो सो कहिये द्विस्तावा । त्रिस्तावा । ये वेदी के नाम हैं ॥

उपसर्गादध्वनः ॥ ५ । ४ । ८५ ॥

उपसर्ग से परे जो अध्वन् उससे समासान्त अच् प्रत्यय हो । जैसे—प्रगतोऽध्वानम् । प्राध्वोरथः । प्राध्वं शकटम् । निरध्वम् । प्रत्यध्वम् । उपसर्गादिति किम् । परमाध्वा । उत्तमाध्वा ॥

तत्पुरुषस्याङ्गुलेः संख्याव्ययादेः ॥ ५ । ४ । ८६ ॥

जो तत्पुरुष समास में अङ्गुलि शब्दान्त हो तो उससे समासान्त अच् प्रत्यय हो । संख्यादि जैसे—द्वे अङ्गुली प्रमाणमस्य तद्द्व्यङ्गुलम् । त्र्यङ्गुलम् । यहां तद्धितार्थ में समास और मात्रच् प्रत्यय का लोप जानना । अव्ययादि—निर्गतमङ्गुलिभ्यो निरङ्गुलम् । अत्यङ्गुलम् । तत्पुरुषस्येति किम् । पञ्चाङ्गुलिः । अत्यङ्गुलिः पुरुषः । (द्वन्द्वाच्चुदषहान्तात् समाहारे) इस सूत्र से पूर्व २ तत्पुरुष का अधिकार जानना ।

अहस्सर्वैकदेशसंख्यातपुण्याच्च रात्रेः ॥ ५ । ४ । ८७ ॥

अहन् सर्व एकदेश वाची संख्यात और पुण्य । चकार से संख्या और अव्यय इन से भी उत्तर जो रात्रि उससे समासान्त अच् प्रत्यय हो । अहर्ग्रहणं द्वन्द्वार्थं द्रष्टव्यम् । अहश्च रात्रिश्च । अहोरात्रः । एकदेशे पूर्वरात्रः । अपररात्रः । पूर्वापराधरेति समासः । संख्याता रात्रिः । संख्यातरात्रः । पुण्यारात्रिः । पुण्यरात्रः । द्वे रात्री समाहृते । द्विरात्रः ॥

अह्नोऽह्न एतेभ्यः ॥ ५ । ४ । ८८ ॥

(एतेभ्यः) अर्थात् संख्या अव्यय । और सर्व एकदेश इत्यादि शब्दों से परे जो अहन् उसको अह्न आदेश हो । संख्यायास्तावत् । जैसे—द्वयोरह्नोर्भवो द्व्यह्नः ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्र्यहः । अहरति क्रान्तः । अत्यह्नः । निरह्नः । सर्वं च तदहश्च । सर्वाह्णः । पूर्वञ्च तदहश्च । पूर्वाह्ण । अपराह्णः । संख्याताह्नः ।

न संख्यादेः समाहारे ॥ ५ । ४ । ८९ ॥

जो समाहार में वर्त्तमान और संख्यादि तत्पुरुष उससे परे अहन् शब्द को अह्न आदेश न हो । जैसे-द्वे अहनी समाहृते । द्व्यहः । त्र्यहः इत्यादि । समाहार इति किम् । द्वयोरन्होर्भव । द्व्यह्नः त्र्यह्नः । तद्धितार्थ इति समासे कृतेऽण आगतस्य द्विगोरिति लुक् ॥

उत्तमैकाभ्याञ्च ॥ ५ । ४ । ९० ॥

उत्तम अर्थात् पुण्य और एक इन से परे अहन् को अह्न आदेश न हो । जैसे—पुण्याहः । एकाहः ॥

राजाहस्सखिभ्यष्टच् ॥ ५ । ४ । ९१ ॥

राजन्, अहन् और सखि इन प्रातिपदिकों से परे समासान्त टच् प्रत्यय हो । जैसे— महाराजः । मद्रराजः । परमाहः । उत्तमाहः । देवसखः । राजसखः । ब्रह्मसखः ॥

अग्राख्यायामुरसः ॥ ५ । ४ । ९३ ॥

अग्राख्या अर्थ में उरस् शब्दान्त तत्पुरुष समास से टच् प्रत्यय हो । जैसे—अश्वानामुरः । अश्वोरसम् । हस्त्युरसम् । अग्राख्यायामिति किम् । देवदत्तस्योरः । देवदत्तोरः ॥

अनोऽश्मायस्सरसां जातिसंज्ञयोः ॥ ५ । ४ । ९४ ॥

जाति और संज्ञा के विषय में अनस्, अश्मन्, अयस् और सरस् शब्दान्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय हो । जैसे—उपानसमिति जातिः । महानसमिति संज्ञा । अमृताश्ममिति जातिः । पिण्डाश्म इति संज्ञा । कालायसमिति जातिः । लोहितायसमिति संज्ञा । मण्डूकसरसमिति जातिः । जलसरसमिति संज्ञा । जातिसंज्ञयोरिति किम् । सदनः । सदश्मा । उत्तमायः । सत्सरः ॥

ग्रामकौटाभ्यां च तक्ष्णः ॥ ५ । ४ । ९५ ॥

ग्राम और कौट से उत्तर जो तक्षन् उससे टच् प्रत्यय हो । ग्रामस्य तक्षा । ग्रामतक्षः । कौटस्य तक्षाः । कौटतक्षः । ग्रामकौटाभ्यांचेति किम् । राज्ञस्तक्षा ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतेः शुनः ॥ ५ । ४ । ९६ ॥

अति से उत्तर श्वन् तदन्त जो तत्पुरुष उससे समासान्त टच् प्रत्यय हो। जैसे—अतिक्रान्तः श्वानमतिश्वः । वराहो जववानित्यर्थः । अतिश्वः सेवकः । सुष्ठु स्वामिभक्त इत्यर्थः ॥

उपमानादप्राणिषु ॥ ५ । ४ । ९७ ॥

प्राणि भिन्न अर्थ में उपमान वाची श्वन् शब्द से टच् प्रत्यय हो। जैसे—आकर्षः श्वेव आकर्षश्वः । फलकश्वः । उपमितं व्याघ्रादिभिरिति समासः । उपमानादिति किम् । नश्वा । अश्वा । लोष्ठः । अप्राणिष्विति किम् । वानरः श्वेव वानरश्वा ॥

उत्तरमृगपूर्वाच्च सक्थ्नः ॥ ५ । ४ । ९८ ॥

उत्तर, मृग और पूर्व, चकार से उपमान पूर्वक जो सक्थिन् तदन्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय हो। उत्तरसक्थम् । मृगसक्थम् । पूर्वसक्थम् । उपमान । फलकमिव सक्थि । फलकसक्थम् ॥

नावो द्विगोः ॥ ५ । ४ । ९९ ॥

नौ शब्दान्त द्विगु से समासान्त टच् प्रत्यय हो। द्वे नावौ समाहृते द्विनावम् । त्रिनावम् । द्वे नावौ धनमस्य द्विनावधनः । पञ्चनावप्रियः । द्वाभ्यान्नौभ्यामागतं द्विनावरूप्यम् । द्विनावमयम् । द्विगोरिति किम् । राजनौः । अतद्धितलुकीत्येव । पञ्चभिर्नौभिः क्रीतः । पञ्चनौः । दशनौः ॥

अर्द्धाच्च ॥ ५ । ४ । १०० ॥

जो अर्द्ध से परे नौ शब्द हो तो उस से समासान्त टच् प्रत्यय हो। अर्द्धं नावः अर्द्धनावम् ॥

खार्य्याः प्राचाम् ॥ ५ । ४ । १०१ ॥

प्राचीन आचार्य्यों के मत में अर्द्ध से उत्तर खारी शब्द और खारी शब्दान्त द्विगु इन से समासान्त टच् प्रत्यय हो। अर्द्धं खार्याः । अर्द्धखारम् । अर्द्धखारी । द्वे खार्य्यौ समाहृते । द्विखारम् । द्विखारि । त्रिखारम् । त्रिखारि ॥

द्वित्रिभ्यामञ्जलेः ॥ ५ । ४ । १०२ ॥

द्वि और त्रि शब्द से परे जो अञ्जलि उस से समासान्त टच् प्रत्यय हो। द्वाव-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ञ्जली समाहृतौ । द्व्यञ्जलम् । त्र्यञ्जलम् । द्विगोरित्येव । द्वयोरञ्जलिः । द्व्यञ्जलिः । अतद्धितलुकीत्येव । द्वाभ्यामञ्जलिभ्यां क्रीतः द्व्यञ्जलिः । त्र्यञ्जलिः । प्राचामित्येव । द्व्यञ्जलिप्रियः ॥

अनसन्तान्नपुंसकाच्छन्दसि ॥ ५ । ४ । १०३ ॥

नपुंसक लिङ्गवाची जो अनन्त और असन्त तत्पुरुष उस से समासान्त टच् प्रत्यय हो । वेद के विषय में । हस्तिचर्मे जुहोति । वृषभचर्मेऽभिषिञ्चति । असन्तात् । देवच्छन्दसानि । मनुष्यच्छन्दसानि । अनसन्तादिति किम् । बिल्वदारु जुहोति । नपुंसकादिति किम् । सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसम् । अनसन्तान्नपुंसकाच्छन्दसि वा वचनम् । ब्रह्मसाम । देवच्छन्दः । ब्रह्मसामम् । देवच्छन्दसम् ॥

ब्रह्मणो जानपदाख्यायाम् ॥ ५ । ४ । १०४ ॥

ब्रह्मन् शब्दान्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय हो जानपद की आख्या अर्थ में । सुराष्ट्रेषु ब्रह्मा । सुराष्ट्रब्रह्मः । अवन्तिब्रह्मः । पञ्चालब्रह्मः । जानपदाख्यायामिति किम् । देवब्रह्मा नारदः ॥

कुमहद्भ्यामन्यतरस्याम् ॥ ५ । ४ । १०५ ॥

कु और महत् से परे जो ब्रह्मन् शब्द सो अन्त में जिस के उस तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय हो । कुब्रह्मः । कुब्रह्मा । महाब्रह्मः । महाब्रह्मा । ब्राह्मणपर्यायो ब्रह्मन् शब्दः ॥

द्वितीयाश्रितातीतपतितगतात्यस्त-प्राप्तापन्नैः ॥ २ । १ । २४ ॥

द्वितीयान्त समर्थ जो सुबन्त सो श्रित अतीत पतित गत अत्यस्त प्राप्त और आपन्न इन सुबन्तों के संग वि० समास पावे । सो समास तत्पुरुषसंज्ञक हो * कष्टं श्रितः । कष्टश्रितः । नरकश्रितः । कान्तारमतीतः । कान्तारातीतः । नरकं पतितः । नरकपतितः । ग्रामं गतः । ग्रामगतः । व्यसनमत्यस्तः । व्यसनात्यस्तः । सुखं प्राप्तः । सुखप्राप्तः । सुखमापन्नः । सुखापन्नः । समर्थग्रहणं किमर्थम् । पश्य देवदत्त कष्टं श्रितो विष्णुमित्रो गुरुकुलम् । यहां कष्ट शब्द का सम्बन्ध पश्य क्रिया के साथ है इसलिये समास नहीं होता ॥

---

* यहां से आगे द्वितीया तत्पुरुष समास चला ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०-श्रितादिषु गमिगाम्यादीनामुपसङ्ख्यानम् ॥

ग्रामं गमी । ग्रामगमी । ग्रामं गामी । ग्रामगामी । ओदनं बुभुक्षुः । ओदनबुभुक्षुः ॥

स्वयं क्तेन ॥ २ । १ । २५ ॥

स्वयं सुबन्त क्तान्त सुबन्त के संग वि० जो समास हो सो समास तत्पुरुषसंज्ञक हो । जैसे—स्वयं धौतौ पादौ । स्वयं विलीनमाज्यम् । एकपद्यमैकस्वर्यं च समासत्वाद् भवति ॥

खट्वा क्षेपे ॥ २ । १ । २५ ॥

क्षेप नाम निंदा का है । द्वितीयान्त खट्वा सुबन्त, क्तान्त सुबन्त के संग वि० समास को प्राप्त हो सो समास तत्पुरुषसंज्ञक हो । जैसे—खट्वारोहणं चेह विमार्गप्रस्थानस्योपलक्षणम् सर्वएवायमविनीतः खट्वारूढ इत्युच्यते । खट्वारूढो जाल्मः । खट्वाप्लुतः । अपथप्रस्थित इत्यर्थः । क्षेप इति किम् । खट्वामारूढः ॥

सामि ॥ २ । १ । २७ ॥

यह सामि अव्यय अर्द्ध का पर्याय है । जैसे—सामिकृतम् । सामिपीतम् । सामिभुक्तम् ॥

कालाः ॥ २ । १ । २८ ॥

जो द्वितीयान्त कालवाची सुबन्त शब्द क्तान्त सुबन्त के साथ समास वि० पावे सो तत्पुरुषसंज्ञक हो । जैसे—षण्मुहूर्त्ताश्चराचराः । ते कदाचिदहर्गच्छन्ति । कदाचिद्रात्रिम् । अहरतिसृता मुहूर्त्ताः । अहस्संक्रान्ताः । रात्र्यतिसृता मुहूर्त्ताः । रात्रिसंक्रान्ताः । मासप्रमितश्चन्द्रमाः । मासं प्रमातुमारब्धः प्रतिपच्चन्द्रमा इत्यर्थः ॥

अत्यन्तसंयोगे च । २ । १ । २९ ॥

द्वितीयान्त कालवाची सुबन्त, सुबन्त के संग समास पावे अत्यन्त संयोग अर्थ में । अत्यन्त संयोग नाम सर्वसंयोग का है । जैसे—मुहूर्त्तं सुखम् । मुहूर्त्तसुखम् । सर्वरात्रकल्याणी । सर्वरात्रशोभना ॥

तृतीयातत्कृतार्थेन गुणवचनेन * । २ । १ । ३० ॥

जो तृतीयान्त सुबन्त (तत्कृतेन) अर्थात् तृतीयार्थकृतगुणवचन के साथ समास

* यहां से आगे तृतीया तत्पुरुष समास का आरम्भ जानो ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो । तथा तृतीयान्त सुबन्त, अर्थ सुबन्त के संग भी समास हो सो तृतीया तत्पुरुष हो । उपादानेन विकलः उपादानविकलः । किरिणा काणः किरिकाणः । शङ्कुलया खण्डः शङ्कुलाखण्डः । धान्येनार्थः धान्यार्थः । तत्कृतेनेति किम् । अक्ष्णा काणः । गुणवचनेनेति किम् । गोभिर्वपावान् । समर्थग्रहणं किम् । त्वं तिष्ठ शंकुलया । खण्डो धावति मुसलेन ॥

पूर्वसदृशसमोनार्थकलहनिपुणमिश्रश्लक्ष्णैः ॥ २ । १ । ३१ ॥

तृतीयान्त सुबन्त का पूर्व सदृश सम ऊनार्थ कलह निपुण मिश्र और श्लक्ष्ण सुबन्तों के साथ समास हो सो तृतीया तत्पुरुष हो । जैसे—मासेन पूर्वः मासपूर्वः । संवत्सरपूर्वः । पित्रासदृशः पितृसदृशः । पित्रा समः पितृसमः । माषेणोनम् । माषोनम् । कार्षापणोनम् । मासविकलम् । कार्षापणविकलम् । असिकलहः । वाक्कलहः । वाग्निपुणः । शास्त्रनिपुणः । गुडामिश्रः । तिलामिश्रः । आचारश्लक्ष्णः ॥

वा०—पूर्वादिष्ववरस्योपसंख्यानम् ॥

मासेनावरः । मासावरः । संवत्सरावरः ॥

कर्तृकरणे कृता बहुलम् ॥ २ । १ । ३२ ॥

कर्त्ता और करण अर्थ में जो तृतीयान्त सुबन्त सो कृदन्त के साथ कहीं २ समास को प्राप्त होते हैं । वह तृतीया तत्पुरुष समास होता है । जैसे अहिना दष्टः । अहिदष्टः । देवदत्तेन कृतम् । देवदत्तकृतम् । नखैर्निर्भिन्नः । नखनिर्भिन्नः । कर्तृकरणे किम् । भिक्षाभिरुषितः । बहुलग्रहणं किम् । दात्रेण लूनवान् । परशुना छिन्न इह समासो न भवति । इह च भवति । पादहारको गलेचोपकः ॥

कृत्यैरधिकार्थवचने ॥ २ । १ । ३३ ॥

कर्त्ता और करणकारक में जो तृतीयान्त सो कृत्य प्रत्ययान्त सुबन्त के सङ्ग वि० समास को प्राप्त हो, अधिकार्थ वचन हो तो । स्तुति निन्दायुक्त वचन को अधिकार्थ वचन कहते हैं । वह तृतीया तत्पुरुष समास कहाता है । जैसे—कर्त्ता । काकपेया नदी । श्वलेह्यः कूपः । करण । वाष्पच्छेद्यानि तृणानि । घनाघात्यो गुणः । कषताड्यो दुष्टः । वा० कृत्यग्रहणे यण्ण्यतोर्ग्रहणम् । इह माभूत् । काकैः पातव्या इति ॥

अन्नेन व्यञ्जनम् ॥ २ । १ । ३४ ॥

जो तृतीयान्त व्यञ्जनवाची सुबन्त का अन्नवाची सुबन्त के साथ समास हो

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सो तृतीया तत्पुरुष हो । जिस से अन्न का संस्कार किया जाय उस को व्यञ्जन कहते हैं । जैसे—दध्ना उपसिक्त ओदनः । दध्योदनः । क्षीरोदनः ॥

भक्ष्येण मिश्रीकरणम् ॥ २ । १ । ३५ ॥

मिश्रीकरण वाची तृतीयान्त सुबन्त भक्ष्यवाची सुबन्त के सङ्ग में वि० समास पावे सो तृतीया तत्पुरुष हो । जैसे—गुडेन मिश्रा धानाः । गुडधानाः । घृतेन मिश्रं शाकम् । घृतशाकम् ॥

ओजः सहोऽम्भस्तमसस्तृतीयायाः ॥ ६ । ३ । ३ ॥

जो तृतीयान्त ओजस्, अम्भस्, तमस् शब्दों से परे तृतीया का अलुक् हो । जो उत्तरपद परे हो तो । जैसे—ओजसा कृतम् । सहसा कृतम् । अम्भसा कृतम् । तमसा कृतम् ॥

वा०—पुंसानुजो जनुषान्धो विकृताक्ष इतिचोपसङ्ख्यानम् ॥

पुंसानुजः । जनुषान्धः । विकृताक्षः ॥

मनसः सञ्ज्ञायाम् ॥ ६ । ३ । ४ ॥

जो सञ्ज्ञा विषय में उत्तरपद परे हो तो तृतीयान्त मनस् से परे तृतीया का अलुक् हो । जैसे—मनसादत्ता । मनसागुप्ता । मनसारामः ॥

आज्ञायिनि च ॥ ६ । ३ । ५ ॥

जो आज्ञायिन् उत्तर पद परे हो तो तृतीयान्त मनस् से परे तृतीया का अलुक् हो । जैसे—मनसाज्ञायी ॥

आत्मनश्च पूरणे ॥ ६ । ३ । ६ ॥

आत्मनाषष्ठः । आत्मनापञ्चमः ॥

चतुर्थी तदर्थार्थबलिहितसुखरक्षितैः ॥ २ । १ । ३६ ॥

जो तदर्थ अर्थात् विकृतिवाची चतुर्थ्यन्त सुबन्त, अर्थ बलि हित सुख और रक्षित सुबन्तों के साथ समास को प्राप्त हो सो चतुर्थी तत्पुरुष कहावे * जैसे—यूपाय दारु यूपदारु । कुण्डलाय हिरण्यम् कुण्डलहिरण्यम् । इह न भवति । रन्धनाय स्थाली । अवहननायोलूखलमिति ॥

* यहां से चतुर्थी तत्पुरुष समास का आरम्भ समझना ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०—अर्थेन नित्यसमासवचनं सर्वलिङ्गता च वक्तव्या ॥

जैसे—ब्राह्मणार्थं पयः । ब्राह्मणार्था यवागूः । ब्राह्मणार्थः कम्बलः । कृमिभ्यो बलिः । कृमिबलिः । गोहितम् । मनुष्यहितम् । गोसुखम् । गोरक्षितम् । अश्वरक्षितम् ।

वैयाकरणाख्यायां चतुर्थ्याः ॥ ६ । ३ । ७ ॥

जो उत्तरपद परे हो तो वैयाकरणों की आख्या अर्थात् संज्ञा विषय में आत्मन् शब्द से परे चतुर्थी का अलुक् हो । आत्मनेभाषा । आत्मनेपदम् ॥

परस्य च ॥ ६ । ३ । ८ ॥

जो वैयाकरणों की आख्या अर्थ में उत्तरपद परे हो तो पर शब्द से परे चतुर्थी का अलुक् हो । जैसे परस्मैपदम् । परस्मैभाषा ॥

पञ्चमी भयेन ॥ २ । १ । ३७ ॥

जो पञ्चम्यन्त सुबन्त, भय सुबन्त के सङ्ग समास को प्राप्त हो सो पञ्चमी तत्पुरुष हो * जैसे—वृकेभ्यो भयम् । वृकभयम् । चोरभयम् । दस्युभयम् ॥

वा०—भयभीतभीतिभीभिरिति वक्तव्यम् ॥

जैसे—वृकेभ्यो भीतः वृकभीतः । वृकभीतिः, वृकभीः ॥

अपेतापोढमुक्तपतितापत्रस्तैरल्पशः ॥ २ । १ । ३८ ॥

जो पञ्चम्यन्त प्रातिपादिक, अपेत अपोढ मुक्त पतित और अपत्रस्त इन सुबन्तों के साथ समास होता है सो पञ्चमी तत्पुरुष हो । जैसे सुखादपेतः सुखापेतः । दुःखापेतः । कल्पनापोढः । कृच्छ्रान्मुक्तः । चक्रमुक्तः । वृक्षपतितः । नरकापत्रस्तः । अल्पशः अर्थात् पञ्चमी अल्पशः समास पावे । सब पञ्चमी नहीं । इस से प्रासादात् पतितः । भोजनादपत्रस्तः, इत्यादि में नहीं होता ॥

स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि क्तेन ॥ २ । १ । ३९ ॥

जो स्तोक अन्तिक दूर और इनके तुल्य पञ्चम्यन्त हैं वे क्तान्त सुबन्त के साथ समास पावें सो पञ्चमी तत्पुरुष हो ॥

अलुगुत्तरपदे ॥ ६ । ३ । १ ॥

अलुक् और उत्तरपद इन दो पदों का अधिकार किया है ।

---

* यहां से पञ्चमी तत्पुरुष का आरम्भ है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्चम्याः स्तोकादिभ्यः । ६ । ३ । २ ॥

स्तोक आदि प्रतिपादकों से परे उत्तरपद हो तो पञ्चमी विभक्ति का लुक् न हो। जैसे—स्तोकान्मुक्तः । स्वल्पान्मुक्तः । अन्तिकादागतः । समीपादागतः । अभ्याशादागतः । दूरादागतः । विप्रकृष्टादागतः । कृच्छ्रान्मुक्तः । कृच्छ्राल्लब्धः । क्लेशान्मुक्तः ॥

वा०—शतसहस्रौ परणेति वक्तव्यम् ॥

शतात्परे परश्शताः । सहस्रात्परे परस्सहस्राः । राजदन्तादित्वात्परनिपातः । निपातनात् सुडागमः ॥

सप्तमी शौण्डैः ॥ २ । १ । ४० ॥

जो सप्तम्यन्त सुबन्त शौण्ड आदि सुबन्तों के साथ वि० समास को प्राप्त हो सो सप्तमी तत्पुरुष हो * जैसे—अक्षेषु शौण्डः अक्षशौण्डः । अक्षधूर्तः । अक्षकितवः ॥

सिद्धशुष्कपक्वबन्धैश्च ॥ २ । १ । ४१ ॥

जो सिद्ध, शुष्क, पक्व और बन्ध, सुबन्तों के सङ्ग सप्तम्यन्त सुबन्त का समास होता है । सो सप्तमी तत्पुरुष होता है । जैसे—सांकाश्यसिद्धः ग्रामसिद्धः । आतपशुष्कः । छायाशुष्कः । पयःपक्वः । तैलपक्वः । घृतपक्वः । स्थालीपक्वः । चक्रबन्धः । गृहबन्धः ॥

ध्वाङ्क्षेण क्षेपे ॥ २ । १ । ४२ ॥

वा०—ध्वाङ्क्षेणेत्यर्थग्रहणं कर्तव्यम् ॥

जो क्षेप अर्थात् निन्दा अर्थ में सप्तम्यन्त सुबन्त, ध्वाङ्क्षवाची सुबन्त के साथ समास पावे सो सप्तमी तत्पुरुष हो । जैसे—तीर्थेध्वांक्ष इव । तीर्थध्वाङ्क्षः । अनवस्थित इत्यर्थः । तीर्थकाकः । तीर्थवायसः । क्षेप इति किम् । तीर्थे ध्वाङ्क्षस्तिष्ठति ॥

कृत्यैर्ऋणे । २ । १ । ४३ ॥

ऋण अर्थ जाना जाय तो सप्तम्यन्त सुबन्त कृत्य प्रत्ययान्त के साथ समास पावे । मासे देयमृणम् । मासदेयम् । सम्वत्सरदेयम् । पूर्वाह्णे गेयं साम । प्रातरध्येयोऽनुवाकः । ऋण इति किम् । मासे देया भिक्षा ॥

---

* यहां से आगे सप्तमी तत्पुरुष का अधिकार चला है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सञ्ज्ञायाम् । २ । १ । ४४ ॥

सञ्ज्ञा अर्थ में जो सप्तम्यन्त सुबन्त, सुबन्त के सङ्ग समास पावे सो सप्तमी तत्पुरुष समास होता है । जैसे—अरण्ये तिलकाः । अरण्ये माषाः । वने किंशुकाः । हलदन्तात्सप्तम्याः सञ्ज्ञायामित्यलुक् ॥

क्तेनाहोरात्रावयवाः । २ । १ । ४५ ॥

जो दिन और रात्रि के अवयववाची सप्तम्यन्त सुबन्त प्रातिपदिक, क्तान्तसुबन्त के साथ समास को प्राप्त हों सो सप्तमी तत्पुरुष समास हों । जैसे-पूर्वाह्णकृतम् । अपराह्णकृतम् । पूर्वरात्रकृतम् । पररात्रकृतम् । अवयवग्रहणं किम् । अहनि भुक्तम् । रात्रौकृतम् ।

तत्र ॥ २ । १ । ४६ ॥

जो तत्र सप्तम्यन्त सुबन्त, क्तान्त सुबन्त के साथ समास पावे सो सप्तमी तत्पुरुष हो । जैसे-तत्र भुक्तम् । तत्र पीतम् । तत्र मृतः ॥

क्षेपे ॥ २ । १ । ४७ ॥

जो क्षेप नाम निन्दा अर्थ में सप्तम्यन्त सुबन्त, क्तान्तसुबन्त के साथ समास पावे सो सप्तमी तत्पुरुष हो । अवतप्ते नकुलस्थितम् तवैतत् । उदके विशीर्णम् । प्रवाहे मूत्रितम् । भस्मनि हुतम् । निष्फले यत् क्रियते तदेवात्रोच्यते । तत्पुरुषे कृति बहुलमित्यलुक् ॥

पात्रे संमितादयश्च ॥ २ । १ । ४८ ॥

पात्रे संमित आदि शब्द निपातन किये हैं क्षेप अर्थ में, सो सप्तमी तत्पुरुष जानना । पात्रे संमिताः । पात्रे बहुलाः । उदरकृमिः । इत्यादि ॥

हलदन्तात्सप्तम्याः संज्ञायाम् ॥ ६ । २ । ९ ॥

हलन्त । और अदन्त प्रातिपदिक से परे सप्तमी का अलुक् हो जो संज्ञा विषय में उत्तर पद परे हो तो । जैसे—युधिष्ठिरः । त्वचिसारः । अदन्तात् । अरण्ये तिलकाः । अरण्ये माषकाः । वने किंशुकाः । वने हरिद्रकाः । वने बल्वजकाः । पूर्वाह्णे स्फोटकाः । कूपे पिशाचकाः । नद्यां कुक्कुटिकाः । नदी कुक्कुटिका । भूम्यां पाशाः । संज्ञायामिति किम् । अक्षशौण्डः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०—हृद्द्युभ्यां ङेः ॥

जो उत्तर पद परे हो तो हृद् और दिव् से परे सप्तमी का अलुक् हो । जैसे—हृदिस्पृक् । दिविस्पृक् ॥

कारनाम्नि च प्राचां हलादौ ॥ ६ । ३ । १० ॥

कारनाम हलादि उत्तरपद परे हो तो प्राचीनों के मत में हलन्त और अदन्त से परे सप्तमी का अलुक् हो । जैसे—सूपेशाणः । मुकुटेकार्षापणम् । हले द्विपदिका । हले त्रिपदिका । कारनाम्नीति किम् । अभ्यर्हिते पशुः । प्राचामिति किम् । यूथे पशुः । यूथपशुः । हलादाविति किम् । अविकटे उरणः अविकटोरणः । हलदन्तादित्येव । नद्यां दोहनी नदीदोहनी ॥

मध्याद्गुरौ ॥ ६ । ३ । ११ ॥

मध्येगुरुः ॥

वा०—अन्ताच्चेति वक्तव्यम् ॥

अन्तेगुरुः ॥

अमूर्द्धमस्तकात्स्वाङ्गादकामे ॥ ६ । ३ । १२ ॥

जो कामवर्जित उत्तरपद परे हो तो मूर्द्ध और मस्तक भिन्न हलन्त और अदन्त से परे सप्तमी का अलुक् हो । जैसे—कण्ठे कालो यस्य सः कण्ठेकालः । उरसिलोमा । उदरेमणिः । अमूर्द्धमस्तकादिति किम् । मूर्द्धशिखः । मस्तकशिखः । अकाम इति किम् । मुखे कामो यस्य मुखकामः । स्वाङ्गादिति किम् । अक्षशौण्डः । हलदन्तादिति किम् । अङ्गुलित्राणः । जङ्घाबालिः ॥

बन्धे च विभाषा ॥ ६ । ३ । १३ ॥

जो घञन्त बन्ध उत्तरपद परे हो तो विकल्प करके हलन्त और अदन्त से परे सप्तमी का अलुक् हो । जैसे—हस्ते बन्धः हस्तबन्धः । चक्रे बन्धः चक्रबन्धः ॥

तत्पुरुषे कृति बहुलम् ॥ ६ । ३ । १४ ॥

तत्पुरुष समास में कृदन्त उत्तरपद परे हो तो सप्तमी का अलुक् बहुल करके हो । अर्थात् कहीं २ हो । स्तम्बेरमः । कर्णेजपः । नच भवति । कुरुचरः । मद्रचरः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रावृट्शरत्कालदिवां जे ॥ ६ । ३ । १५ ॥

जो ज उत्तरपद परे हो तो प्रावृट्, शरत्, काल, दिव, इनसे परे सप्तमी का अलुक् हो। जैसे—प्रावृषिजः। शरदिजः। कालेजः। दिविजः ॥

विभाषा वर्षक्षरशरवरात् ॥ ६ । ३ । १६ ॥

इन शब्दों से परे वि० सप्तमी का अलुक् हो। वर्षेजः वर्षजः। क्षरेजः क्षरजः। वरेजः वरजः ॥

घकालतनेषु कालनाम्नः ॥ ६ । ३ । १७ ॥

जो * घ संज्ञक प्रत्यय, काल और तन प्रत्यय परे हों तो सप्तमी का अलुक् हो। जैसे—पूर्वाह्णेतरे। पूर्वाह्णेतमे। पूर्वाह्णतरे। पूर्वाह्णतमे। पूर्वाह्णे काले पूर्वाह्णकाले। पूर्वाह्णे तने पूर्वाह्णतने। कालनाम्न इति किम्। शुक्लतरे। शुक्लतमे। हलदन्तादिति किम्। रात्रितरायाम् ॥

शयवासवासिष्वकालात् ॥ ६ । ३ । १८ ॥

जो शय, वास, वासि, ये उत्तर पद परे हों तो वि० सप्तमी का अलुक् हो। खेशयः। खशयः। ग्रामे वासः ग्रामवासः। ग्रामेवासी ग्रामवासी। अकालादिति किम्। पूर्वाह्णशयः। हलदन्तादित्येव। भूमिशयः ॥

नेन्सिद्धबध्नातिषु च ॥ ६ । ३ । १९ ॥

जो इन् प्रत्ययान्त सिद्ध और बध्नाति ये उत्तरपद परे हों तो सप्तमी का अलुक् न हो अर्थात् लुक् हो। स्थण्डिलशायी। सांकाश्यसिद्धः। चक्रबन्धकः। चरकबन्धकः ॥

स्थे च भाषायाम् ॥ ६ । ३ । २० ॥

जो स्थ उत्तरपद परे हो तो लोक में सप्तमी का अलुक् न हो। जैसे—समस्थः। विषमस्थः। भाषायामिति किम्। कृष्णोस्याखरेष्ठः ॥

पूर्वकालैकसर्वजरत्पुराणनवकेवलाः समानाधिकरणेन ॥ २ । १ । ४९ ॥

---

* "तरप्तमपौघः" इस सूत्र से तरप् और तमप् की घ संज्ञा है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वकाल यह अर्थ का ग्रहण है । पूर्वकाल । एक । सर्व । जरत् । पुराण । नव और केवल । सुबन्त शब्द, समानाधिकरण सुबन्त के साथ समास पावे * जैसे—पूर्वं स्नातः पश्चादनुलिप्तः स्नातानुलिप्तः । कृष्टसमीकृतम् । दग्धप्ररूढम् । एका चासौ शाटी च एकशाटी । सर्वे च ते वेदाश्च सर्ववेदाः । जरच्चासौ वैद्यश्च जरद्वैद्यः । पुराणान्नम् । नवान्नम् । केवलान्नम् । समानाधिकरणेनेति किम् । एकस्याः शाटी ॥

दिक्संख्ये संज्ञायाम् ॥ २ । १ । ५० ॥

संज्ञा के विषय में दिक् और संख्यावाची शब्द समानाधिकरण के साथ समास पावें। समानाधिकरण की अनुवृत्ति पाद की समाप्ति पर्यन्त जाननी । पूर्वेषु कामशमी । अपरेषु कामशमी । संख्या । पञ्चाम्राः । सप्तर्षयः । संज्ञायामिति किम् । उत्तराः वृक्षाः । पञ्च ब्राह्मणाः ॥

तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च ॥ २ । १ । ५१ ॥

दिग् वाची शब्द और संख्यावाची शब्द तद्धित अर्थ में तथा उत्तरपद परे हो तो समाहार अर्थ में समानाधिकरण के साथ समास को प्राप्त हों । पूर्वस्यां शालायां भवः पौर्वशालः । औत्तरशालः । आपरशालः । उत्तरपदे । पूर्वा शाला प्रिया यस्य स पूर्वशालाप्रियः । अपरशालाप्रियः । संख्यातद्धितार्थे । पाञ्चनापितिः । पाञ्चकपालः । उत्तरपदे । पञ्चगवधनः । समाहारे । पञ्चकपालानि समाहृतानि यस्मिंस्तत्पञ्चकपालं गृहम् । पञ्चफली । दशपूली । पञ्चकुमारि । दशकुमारि । दशग्रामी । अष्टाध्यायी ॥

संख्यापूर्वो द्विगुः ॥ २ । १ । ५२ ॥

जो तद्धितार्थोत्तरपद समाहार में संख्या पूर्व समास है सो द्विगुसंज्ञक होता है । पञ्चसु कपालेषु संस्कृतः पञ्चकपालः । दशकपालः । द्विगोर्लुगनपत्य इति लुक् । ऐसे ही समासान्त तथा ङीप् इत्यादि कार्य्य जानने चाहियें । पञ्चनावप्रियः । तावच्छती ॥

कुत्सितानि कुत्सनैः ॥ २ । १ । ५३ ॥

जो कुत्सितवाची सुबन्त का कुत्सन वचन सुबन्तों के साथ समास हो सो तत्पुरुषसंज्ञक हो । जैसे—वैयाकरणखसूचिः । निष्प्रतिभ इत्यर्थः । याज्ञिककितवः । अयाज्य

---

* यह समास बहुधा प्रथमा विभक्ति में आता है इसलिये प्रथमा तत्पुरुष और कर्मधारय समास भी कहते हैं ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याजनतृष्णापरः । मीमांसकदुर्दुरूटः । नास्तिकः । कुत्सितानीति किम् । वैयाकरणश्चौरः । कुत्सनैरिति किम् । कुत्सितो ब्राह्मणः ॥

पापाणके कुत्सितैः ॥ २ । १ । ५४ ॥

जो पाप और अणक सुबन्त का कुत्सित सुबन्तों के साथ समास हो सो समानाधिकरण हो । जैसे—पापनापितः । पापकुलालः । अणकनापितः । अणककुलालः ॥

उपमानानि सामान्यवचनैः ॥ २ । १ । ५५ ॥

जो (स० *) उपमानवाची सुबन्त का सामान्य वचन सुबन्तों के साथ समास हो सो० । शस्त्रीव श्यामा । शस्त्रीश्यामा देवदत्ता । कुमुदश्येनी । हंसगद्गदा । घन इव श्यामः घनश्यामो देवदत्तः । उपमानानीति किम् । देवदत्ता श्यामा । सामान्यवचनैरिति किम् । पर्वता इव वलाहकाः ॥

उपमितं व्याघ्रादिभिः सामान्याप्रयोगे ॥ २ । १ । ५६ ॥

जो उपमित अर्थात् उपमेयवाची सुबन्त का व्याघ्रादि सुबन्तों के साथ समास हो । सो० । पुरुषोऽयं व्याघ्र इव पुरुषव्याघ्रः । पुरुषसिंहः । सिंह इव ना नृसिंहः । सामान्याप्रयोगे इति किम् । पुरुषो व्याघ्र इव शूरः ॥

विशेषणं विशेष्येण बहुलम् ॥ २ । १ । ५७ ॥

जो विशेषणवाची सुबन्त का विशेष्यवाची समानाधिकरण सुबन्त के साथ समास हो । सो० । नीलञ्च तदुत्पलञ्च नीलोत्पलम् । रक्तोत्पलम् । बहुलवचनं व्यवस्थार्थम् । क्वचिन्नित्यसमास एव । कृष्णसर्पः । लोहितशालिः । क्वचिन्न भवत्येव रामो जामदग्न्यः । अर्जुनः कार्त्तवीर्य्यः । क्वचिद्विकल्पः । नीलमुत्पलम् नीलोत्पलम् ॥

पूर्वापरप्रथमचरमजघन्यसमानमध्यमध्यमवीराश्च ॥ २ । १ । ५८ ॥

पूर्व, अपर, प्रथम, चरम, जघन्य, समान, मध्य, मध्यम और वीर जो इन सुबन्तों का समानाधिकरण सुबन्तों के साथ समास हो सो० । पूर्वश्चासौ पुरुषश्च पूर्वपुरुषः । अपरपुरुषः । प्रथमपुरुषः । चरमपुरुषः । जघन्यपुरुषः । समानपुरुषः । मध्यपुरुषः मध्यमपुरुषः । वीरपुरुषः ॥

---

* इस संकेत से समानाधिकरण तत्पुरुष जानना ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रेण्यादयः कृतादिभिः ॥ २ । १ । ५९ ॥

श्रेणि आदि सुबन्तों का कृत आदि सुबन्तों के साथ समास हो । सो० ।

वा०-श्रेण्यादिषु च्व्यर्थवचनम् ॥

जैसे-अश्रेणयः । श्रेणयः कृताः श्रेणीकृता वणिजो वसन्ति । च्व्यन्तानान्तु कुगतिप्रादय इत्यनेन नित्यसमासः ॥

क्तेन नञ्विशिष्टेनानञ् ॥ २ । १ । ६० ॥

जो नञ् रहित क्तान्त सुबन्त का नञ् विशिष्ट क्तान्त सुबन्त समानाधिकरण के साथ समास हो सो० । जैसे—कृतं च तदकृतम् । कृताकृतम् । भुक्ताभुक्तम् । पीतापीतम् । उदितानुदितम् । अशितानशितेन जीवति । क्लिष्टाक्लिष्टेन वर्त्तते ॥

वा०-कृतापकृतादीनामुपसंख्यानम् ॥

कृतापकृतम् । भुक्तविभुक्तम् । पीतविपीतम् । गतप्रत्यागतम् । यातानुयातम् । क्रयाक्रयिका । पुटापुटिका । फलाफलिका । मानोन्मानिका ॥

वा० - समानाधिकरणाधिकारे शाकपार्थिवादीनामुपसंख्यानमुत्तरपदलोपश्च ॥

शाकप्रधानः पार्थिवः शाकपार्थिवः । कुतपसौश्रुतः । अजातौल्वलिः ॥

सन्महत्परमोत्तमोत्कृष्टाः पूज्यमानैः ॥ २ । १ । ६१ ॥

जो सत्, महत्, परम, उत्तम, उत्कृष्ट, सुबन्तों का पूज्यमान सुबन्तों के साथ समास हो सो० । जैसे-सत्पुरुषः । महापुरुषः । परमपुरुषः । उत्तमपुरुषः । उत्कृष्टपुरुषः । पूज्यमानैरिति किम् । उत्कृष्टो गौः कर्दमात् ॥

वृन्दारकनागकुञ्जरैः पूज्यमानम् ॥ २ । १ । ६२ ॥

जो वृन्दारक नाग कुञ्जर सुबन्तों के साथ पूज्यमान अर्थों के वाचक सुबन्त के साथ समास हो । सो० । गोवृन्दारकः । अश्ववृन्दारकः । गोनागः । अश्वनागः । गोकुञ्जरः । पूज्यमानमिति किम् । सुसीमो नागः ॥

कतरकतमौ जातिपरिप्रश्ने ॥ २ । १ । ६३ ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो जाति के परिप्रश्न अर्थ में वर्त्तमान कतर कतम प्रत्ययान्त सुबन्त का समानाधिकरण सुबन्त के साथ समास हो सो० । जैसे—कतरकठः । कतरकलापः । कतमकठः । कतमकलापः । जातिपरिप्रश्न इति किम् । कतरो भवतोर्देवदत्तः । कतमो भवतां देवदत्तः ॥

किं क्षेपे ॥ २ । १ । ६४ ॥

किम् शब्द का क्षेप अर्थ में सुबन्त के साथ समास हो सो० । जैसे—किं राजा यो न रक्षति । किं सखा योऽभिद्रुह्यति । किं गौः यो न वहति ॥

किमः क्षेपे ॥ ५ । ४ । ७० ॥

क्षेप अर्थ में जो किम् शब्द उस से समासान्त प्रत्यय न हो * ॥

पोटायुवतिस्तोककतिपयगृष्टिधेनुवशावेहद्बष्कयणीप्रवक्तृश्रोत्रियाध्यापकधूर्त्तैर्जातिः ॥ २ । १ । ६५ ॥

जो पोटा, युवति, स्तोक, कतिपय, गृष्टि, धेनु, वशा, वेहद्, वष्कयणी, प्रवक्तृ, श्रोत्रिय, अध्यापक, धूर्त्त इन सुबन्तों का जातिवाची सुबन्तों के साथ समास होता है वह तत्पुरुष हो । जैसे—इभा चासौ पोटा च इभपोटा । इभयुवतिः । अग्निस्तोकः । उदश्वित्कतिपयम् । गोगृष्टिः । गोधेनुः । गोवशा । गोवेहत् । गोवष्कयणी । कठप्रवक्ता । कठश्रोत्रियः । कठाध्यापकः । कठधूर्त्तः । जातिरिति किम् । देवदत्तः प्रवक्ता ॥

प्रशंसावचनैश्च ॥ २ । १ । ६६ ॥

जातिवाची सुबन्त, प्रशंसावाची सुबन्तों के साथ समास को प्राप्त हो सो० । जैसे—गोप्रकाण्डम् । अश्वप्रकाण्डम् । गोमतल्लिका । गोमचर्चिका । अश्वमचर्चिका । जातिरिति किम् । कुमारीमतल्लिका ॥

युवा खलतिपलितबलिनजरतीभिः ॥ २ । १ । ६७ ॥

खलति, पलित, बलिन और जरती, इन सुबन्तों के साथ युवन् सुबन्त समास को प्राप्त हो सो तत्पुरुष हो । युवाखलतिः युवखलतिः । युवतिः खलति युवखलतिः । युवा पलितः युवपलितः । युवतिः पलिताः युवपलिता । युवा बलिनः युवबलिनः । युवातिर्बलिना । युवबलिना । युवाजरन् युवजरन् । युवतिर्जरती युवजरती ॥

* किंराजा आदि उदाहरणों में टच् प्रत्यय न हुआ ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृत्यतुल्याख्या अजात्या ॥ २ । १ । ६८ ॥

कृत्य प्रत्ययान्त और तुल्य तथा तुल्य के समानार्थ जो सुबन्त, सो जातिवर्जित सुबन्त के साथ समास पावे सो समानाधिकरण तत्पुरुष कर्मधारय समास हो । जैसे भोज्यं च तदुष्णञ्च भोज्योष्णम् । भोज्यलवणम् । पानीयशीतम् । तुल्याख्या । तुल्यश्वेतः । तुल्यमहान् । सदृशश्वेतः । सदृशमहान् । अजात्येति किम् । रक्षणीयो मनुष्यः ॥

वर्णो वर्णेन ॥ २ । १ । ६९ ॥

वर्ण विशेषवाची समानाधिकरण, सुबन्त के साथ वर्ण विशेषवाची सुबन्त समास पावे सो० । कृष्णसारङ्गः । लोहितसारङ्गः * । कृष्णशबलः । लोहितशबलः ॥

कुमारः श्रमणादिभिः ॥ २ । १ । ७० ॥

कुमार शब्द, श्रमणा आदि सुबन्तों के साथ समास पावे सो० । कुमारी श्रमणा कुमारश्रमणा । कुमारी प्रव्रजिता कुमारप्रव्रजिता । कुमारी कुलटा कुमारकुलटा । इत्यादि ॥

चतुष्पादो गर्भिण्या ॥ २ । १ । ७१ ॥

चतुष्पाद्वाची सुबन्त, गर्भिणी सुबन्त के साथ समास पावे सो तत्पुरुष हो । जैसे—गोगर्भिणी । अजागर्भिणी । महिषीगर्भिणी ॥

प्राप्तपन्ने च द्वितीयया ॥ २ । २ । ४ ॥

प्राप्त और आपन्न सुबन्त, द्वितीयान्तसुबन्त के साथ समास को प्राप्त हों । जैसे—प्राप्तो जीविकाम् प्राप्तजीविकः । जीविकाप्राप्त इति वा । आपन्नो जीविकाम् आपन्नजीविकः । जीविकापन्न इति वा ॥

कालाः परिमाणिना ॥ २ । २ । ५ ॥

कालवाची सुबन्त, परिमाणवाची सुबन्त के साथ समास को प्राप्त हो सो तत्पुरुष हो । जैसे—मासो जातोऽस्य स मासजातः । संवत्सरजातः । द्व्यहजातः । त्र्यहजातः ॥

नञ् ॥ २ । २ । ६ ॥

नञ् समर्थ सुबन्त के साथ समास पावे सो नञ् तत्पुरुष हो । जैसे—न ब्राह्मणः अब्राह्मणः । अवृषलः ॥

---

* अनेक शब्द समस्त हो के एकही पदार्थ के वाचक हों ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्व अपर अधर उत्तर ये सुबन्त, एकदेशवाची अर्थात् अवयववाची सुबन्त के साथ समास पावें। एक * अधिकरण अर्थात् एक द्रव्य वाच्य हो तो। षष्ठी समासापवादोऽयं योगः। पूर्वं कायस्य पूर्वकायः। अपरकायः। अधरकायः। उत्तरकायः। एकदेशिनेति किम्। पूर्वं नाभेः कायस्य। एकाधिकरण इति किम्। पूर्वं छात्राणामामन्त्रय॥

अर्द्धं नपुंसकम्॥ २। २। २॥

जो नपुंसक लिङ्ग अर्द्ध शब्द, एक देशी एकाधिकरण सुबन्त के साथ समास को प्राप्त हो सो तत्पुरुष हो। जैसे—अर्द्धं पिप्पल्याः अर्द्धपिप्पली। अर्द्धकौशातकी। नपुंसकमिति किम्। ग्रामार्द्धः। नगरार्द्धः। एकदेशिनेत्येव। अर्द्धं ग्रामस्य देवदत्तस्य। एकाधिकरण इत्येव। अर्द्धं पिप्पलीनाम्॥

द्वितीयतृतीयचतुर्थतुर्याण्यन्यतरस्याम्॥ २। २। ३॥

द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और तुर्य ये सुबन्त, एकदेशि एकाधिकरण सुबन्त के साथ समास को प्राप्त हों सो तत्पुरुष हों। द्वितीयं भिक्षायाः द्वितीयभिक्षा। षष्ठीसमासः। पक्षे भिक्षाद्वितीयं वा। तृतीयं भिक्षायाः तृतीयभिक्षा। भिक्षातृतीयं वा। चतुर्थं भिक्षायाः चतुर्थभिक्षा। भिक्षाचतुर्थं वा। एकदेशिनेत्येव। द्वितीयं भिक्षायाः भिक्षुकस्य। एकाधिकरण इत्येव। द्वितीयं भिक्षाणाम्॥

वा०—चतुष्पाज्जातिरिति वक्तव्यम्॥

इह माभूत्। कालाक्षी गर्भिणी। स्वस्तिमती गर्भिणी। चतुष्पाद इति किम्। ब्राह्मणी गर्भिणी॥

मयूरव्यंसकादयश्च। २। १। ७२॥

मयूरव्यंसक आदि शब्द निपातन किये हैं सो०। जैसे—मयूरव्यंसकः। छात्रव्यंसकः॥

इति समानाधिकरणः कर्म्मधारयस्तत्पुरुषः समाप्तः॥

अथैकाधिकरणस्तत्पुरुषः॥

पूर्वापराधरोत्तरमेकदेशिनैकाधिकरणे॥ २। २। १॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्मान्नुडचि ॥ ६ । ३ । ७४ ॥

तस्मात् नाम लोप हुये नञ् के नकार से परे अजादि उत्तरपद को नुट् का आगम हो । न अच् अनच् । न अश्वः अनश्वः । न उष्ट्रः अनुष्ट्रः । इत्यादि ॥

नञस्तत्पुरुषात् ॥ ५ । ४ । ७१ ॥

जो नञ् से परे राज आदि शब्द सो अन्त में जिस तत्पुरुष के उस से समासान्त प्रत्यय न हो । अराजा । असखा । अगौः । तत्पुरुषादिति किम् । अनृचो माणवकः । अधुरं शकटम् ॥

पथो विभाषा ॥ ५ । ४ । ७२ ॥

जो नञ् से परे पथिन् शब्द सो जिस तत्पुरुष के अन्त में हो उस से समासान्त प्रत्यय विकल्प कर के हो । अपथम् । अपन्थाः ।

ईषदकृता ॥ २ । २ । ७ ॥

जो सुबन्त ईषत् शब्द कृत् वर्जित सुबन्त के साथ समास को प्राप्त हो वह तत्पुरुष समास हो ॥

वा०–ईषदगुणवचनेनेति वक्तव्यम् ॥

ईषत्कडारः । ईषत्पिङ्गलः । ईषद्विकारः । ईषदुन्नतः । ईषत्पीतम् । गुणवचनेनेति किम् । ईषद् गार्ग्यः । *

षष्ठी ॥ २ । २ । ८ ॥

षष्ठ्यन्त सुबन्त, समर्थ सुबन्त के साथ वि० समास पावे । सो षष्ठी तत्पुरुष जानो । राज्ञः पुरुषः राजपुरुषः । राज्ञः पुरुषौ राजपुरुषौ । राज्ञां पुरुषाः राजपुरुषाः । राज्ञ पुरुषौ पुरुषा वा । ब्राह्मणकम्बलः ॥

वा०—कृद्योगा च षष्ठी समस्यत इति वक्तव्यम् ॥

जैसे—इध्मव्रश्चनः । पलाशशातनः । किमर्थमिदमुच्यते । प्रतिपदविधाना षष्ठी न समस्यत इति वक्ष्यति तस्यायं पुरस्तादपकर्षः ॥

---

* यहांतक तत्पुरुष समास का प्रकरण आया इसके आगे षष्ठीतत्पुरुष का प्रकरण समझना चाहिये ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याजकादिभिश्च ॥ २ । २ । ९ ॥

षष्ठ्यन्त याजक आदि शब्द, सुबन्तों के साथ समास पावें सो षष्ठी० । जैसे—ब्राह्मणयाजकः । क्षत्रिययाजकः ॥

षष्ठ्या आक्रोशे ॥ ६ । ३ । २१ ॥

आक्रोशे अर्थात् निन्दा अर्थ में उत्तरपद परे हों तो षष्ठी का अलुक् हो । जैसे—चौरस्य कुलम् । आक्रोश इति किम् । ब्राह्मणकुलम् ॥

वा०—षष्ठीप्रकरणे वाग्दिक्पश्यद्भ्यो युक्तिदण्डहरेषु यथासंख्य-मलुग्वक्तव्यः ॥

जैसे—वाचोयुक्तिः । दिशोदण्डः । पश्यतोहरः ॥

वा०—आमुष्यायणामुष्यपुत्रिकामुष्यकुलिकेति चालुग् वक्तव्यः ॥

अमुष्याऽपत्यम् आमुष्यायणः । नडादित्वात् फक् । अमुष्य पुत्रस्य भावः आमुष्यपुत्रिका । मनोज्ञादित्वाद् वुञ् । तथा आमुष्यकुलिकेति ॥

वा०—देवानां प्रिय इत्यत्र च षष्ठ्या अलुग्वक्तव्यः ॥

जैसे—देवानां प्रियः ॥

वा०—शेपपुच्छलाङ्गूलेषु शुनः संज्ञायां षष्ठ्या अलुग् वक्तव्यः ॥

जैसे—शुनः शेपः । शुनः पुच्छः । शुनो लाङ्गूलः ॥

वा०—दिवश्च दासे षष्ठ्या अलुग् वक्तव्यः ॥

दिवोदासाय गायति ॥

पुत्रेऽन्यतरस्याम् ॥ ६ । ३ । २२ ॥

पुत्र उत्तरपद परे हो तो आक्रोश अर्थ में षष्ठी का अलुक् विकल्प कर के हो । जैसे—दास्याः पुत्रः । दासीपुत्रो वा । आक्रोश इति किम् । ब्राह्मणीपुत्रः ॥

ऋतो विद्यायोनिसम्बन्धेभ्यः ॥ ६ । ३ । २३ ॥

ऋकारान्त विद्यासम्बन्धी और ऋकारान्त योनि सम्बन्धियों से परे षष्ठी का अलुक्

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो, जैसे-होतुरन्तेवासी । होतुः पुत्रः । पितुरन्तेवासी । पितुः पुत्रः । ऋत इति किम् । आचार्य्यपुत्रः । मातुलपुत्रः ॥

विभाषा स्वसृपत्योः ॥ ६ । ३ । २४ ॥

ऋकारान्त विद्या सम्बन्धी और ऋकारान्त योनि सम्बन्धियों से स्वसृ तथा पति उत्तरपद परे हो तो वि० षष्ठी का अलुक् हो । जैसे-मातुः ष्वसा । मातुः स्वसा । मातृष्वसा । पितुः स्वसा । पितुःष्वसा । पितृष्वसा । दुहितुः पतिः । दुहितृपतिः । ननान्दुः पतिः । ननान्दृपतिः ।

नित्यं क्रीडा जीविकयोः ॥ २ । २ । १७ ॥

क्रीडा और जीविका अर्थ में षष्ठी सुबन्त के साथ नित्य समास पावे । जैसे—(क्रीडा) उद्दालकपुष्पभञ्जिका । वारणपुष्पप्रचायिका (जीविका) दन्तलेखकः । पुस्तकलेखकः । क्रीडाजीविकयोरिति किम् । ओदनस्य भोजकः * ॥

कुगतिप्रादयः ॥ २ । २ । १८ ॥

कु अव्यय गतिसंज्ञक और प्रादिगणस्थ शब्द समर्थ सुबन्त के साथ समास को प्राप्त हों । जैसे-कु । कुत्सितः पुरुषः कुपुरुषः । गति । उररीकृतम् । यदूरीकरोति । प्रादयः ॥

वा०-दुर्निन्दायाम् ॥ दुष्पुरुषः ॥

वा० स्वती पूजायाम् ॥

सु और अति ये पूजा अर्थ में ही समास को प्राप्त हों । शोभनः पुरुषः सुपुरुषः । अतिपुरुषः ॥

वा०-आङीषदर्थे ॥

आपिङ्गलः । आकडारः । दुष्कृतम् । अतिस्तुतम् । आबद्धम् ॥

वा०-प्रादयो गताद्यर्थे प्रथमया ॥

प्रगत आचार्यः प्राचार्यः । प्रान्तेवासी ॥

---

* यहांतक षष्ठी तत्पुरुष आया इस के आगे पूर्वतत्पुरुष का प्रकरण चला है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०-अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया ॥

अतिक्रान्तः खट्वाम् । अतिखट्वः । अतिमालः ॥

वा०-अवादयः कुष्टाद्यर्थे तृतीयया ॥

अवक्रुष्टः कोकिलया अवकोकिलः ॥

वा०-पर्यादयो ग्लानाद्यर्थे चतुर्थ्या ॥

परिग्लानोऽध्ययनाय पर्यध्ययनः । अलं कुमार्य्यै । अलंकुमारिः ॥

वा०-निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्या ॥

निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः निष्कौशाम्बिः । निर्वाराणसिः । निष्क्रान्तः सभायाः निःसभः ॥

वा०-प्रादिप्रसङ्गे कर्म्मप्रवचनीयानां प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥

वृक्षं प्रति विद्योतते विद्युत् । साधुर्देवदत्तो मातरं प्रति ॥

उपपद मतिङ् ॥ २ । २ । १९ ॥

जो तिङ् वर्जित उपपद है सो समर्थ सुबन्त के साथ नित्य समास को प्राप्त हो सो तत्पुरुष समास हो । जैसे—कुम्भकारः । नगरकारः । इत्यादि ॥

न पूजनात् ॥ ५ । ४ । ६९ ॥

पूजन वाची से परे समासान्त प्रत्यय न हो । जैसे सुराजा । अतिराजा । सुसखा । अतिसखा । सुगौः । अतिगौः ॥

अमैवाव्ययेन ॥ २ । २ । २० ॥

जो उपपद अव्यय के साथ समास हो तो अम् अव्यय ही के साथ हो अन्य के सङ्ग नहीं । स्वादुंकारं भुङ्क्ते । लवणंकारं भुङ्क्ते । संपन्नंकारं भुङ्क्ते । अमैवेति किम् । नेह भवति कालो भोक्तुम् । एवकारकरणमुपपदविशेषणार्थम् । अमैव यत्तुल्यविधानमुपपदं तस्य समासो यथा स्यात् । अमा चान्येन च यत्तुल्यविधानं तस्य माभूत् । अग्रेभुक्त्वा । अग्रेभोजम् ॥

तृती[illegible]प्रभृतीन्यन्यतरस्याम् ॥ २ । २ । २१ ॥

(उपदंशस्तृतीयायाम्) । यहां से ले के जो उपपद हैं वे अम् अव्यय के साथ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वि० समास को प्राप्त हों सो तत्पुरुष समास हो। मूलकेनोपदंशं भुङ्क्ते। मूलकेनोपदंशं भुङ्क्ते। उच्चैःकारं समाचष्टे। उच्चैःकारेण वा। अमैवेत्येव॥

वा०—पर्य्याप्तिवचनेष्वलमर्थेषु॥

पर्य्याप्तो भोक्तुम्। प्रभुर्भोक्तुम्। समर्थो भोक्तुम्॥

क्त्वा च॥ २। २। २२॥

तृतीया प्रभृति शब्द क्त्वा प्रत्यय के साथ समास को प्राप्त वि० हों। उच्चैःकृत्य। उच्चैःकृत्वा॥

*** शेषो बहुव्रीहिः॥ २। २। २३॥**

शेषः अर्थात् उक्त समासों को छोड़ के जो आगे समास कथन करते हैं सो बहुव्रीहि है। यह अधिकार सूत्र भी है॥

अनेकमन्यपदार्थे॥ २। २। २४॥

जो अन्य पद के अर्थ में वर्त्तमान अनेक सुबन्त, सो सुबन्त के सङ्ग समास को प्राप्त हो उस को बहुव्रीहि जानो। * विशाले नेत्रे यस्य स विशालनेत्रः। बहु धनं यस्य स बहुधनो बहुधनको वा पुरुषः। एक प्रथमा विभक्ति के अर्थ को छोड़ कर सब विभक्ति के अर्थों में बहुव्रीहि समास होता है। प्राप्तमुदकं यं ग्रामम् स प्राप्तोदको ग्रामः। ऊढो रथो येन स ऊढरथोऽनड्वान्। उपहृतमुदकं यस्मै स उपहृतोदकोऽतिथिः। उद्धृत ओदनो यस्याः सा उद्धृतौदना स्थाली। अच् अन्तो यस्य स अजन्तो धातुः। वीराः पुरुषा यस्मिन् ग्रामे स वीरपुरुषो ग्रामः। परन्तु प्रथमा के अर्थ में नहीं होता है। वृष्टे मेघे गतः। अनेक ग्रहणं किम्। बहूनामपि यथा स्यात्। सुसूक्ष्मजटकेशः। इत्यादि॥

वा०—बहुव्रीहिः समानाधिकरणानामिति वक्तव्यम्॥

व्यधिकरणानां माभूत्। पञ्चभिर्भुक्तमस्य॥

---

* यहांतक कुगति और प्रादि प्रयुक्त तत्पुरुष समास आया इस के आगे बहुव्रीहि का अधिकार चला है।

† इस बहुव्रीहिसमास के विग्रह में प्रथमा और अन्य पदार्थ में द्वितीया आदि विभक्तियों के प्रयोग होते हैं, जैसे नेत्र शब्द प्रथमा और यत् शब्द से षष्ठी हुई है वैसे सर्वत्र समझो॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०—अव्ययानां च बहुव्रीहिर्वक्तव्यः ॥

उच्चैर्मुखः । नीचैर्मुखः ॥

वा०—सप्तम्युपमानपूर्वपदस्योत्तरपदलोपश्च ॥

कण्ठे स्थितः कालो यस्य कण्ठकालः । उरसिलोमा । उष्ट्रस्य मुखमिव मुखं यस्य स उष्ट्रमुखः । खरमुखः ॥

वा०—समुदायविकारषष्ठ्याश्च बहुव्रीहिरुत्तरपदलोपश्चेति वक्तव्यम् ॥

केशानां संघातः केशसंघातः । केशसंघातश्चूडाऽस्य स केशचूडः । सुवर्णविकारोऽलंकारोऽस्य स सुवर्णाऽलंकारः ॥

वा०—प्रादिभ्यो धातुजस्योत्तरपदलोपश्च वा बहुव्रीहिर्वक्तव्यः ॥

प्रपतितं पर्णमस्य प्रपर्णः । प्रपतितं पलाशमस्य प्रपलाशः ॥

वा०—नञोऽस्त्यर्थानां बहुव्रीहिर्वा चोत्तरपदलोपश्च वक्तव्यः ॥

अविद्यमानः पुत्रो यस्य सोऽपुत्रः । अविद्यमाना भार्य्या यस्य सोऽभार्यः । अविद्यमानभार्य्यः ॥

वा०—सुबधिकारेऽस्तिक्षीरादीनां बहुव्रीहिर्वक्तव्यः ॥

अस्तिक्षीरा ब्राह्मणी । अस्त्यादयो निपाताः ॥

स्त्रियाः पुंवद्भाषितपुंस्कादनूङ्समानाधिकरणे स्त्रियामपूरणीप्रियादिषु ॥ ६ । ३ । ३४ ॥

भाषितः पुमान् येन स भाषितपुंस्कः तस्मात् । भाषित पुंलिङ्ग से परे ऊङ्वर्जित जो स्त्री शब्द उसको पुंवत् हो अर्थात् उसका पुंलिङ्ग के सदृश रूप होता है समानाधिकरण स्त्रीलिङ्ग वाची उत्तरपद परे हो तो । परन्तु पूर्णी तथा प्रियादि को छोड़ के । दर्शनीया भार्या यस्य स दर्शनीयभार्यः । रूपवद्भार्यः । श्लक्ष्णचूडः । पूर्णा विद्या यस्या सा पूर्णविद्या । विदिता नीतिर्यया सा विदितनीतिः । सुशिक्षिताः वाणी यस्याः सा सुशिक्षितवाणी । स्त्रिया इति किम् । ग्रामणि ब्राह्मणकुलं दृष्टिरस्य ग्रामणिदृष्टिः । भाषितपुंस्कादिति किम् । खट्वाभार्यः । अनूङिति किम् । ब्रह्मबन्धूभार्यः । समानाधिकरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इति किम् । कल्याण्या माता कल्याणीमाता । स्त्रिया मिति किम् । कल्याणीप्रधानमेषाम् कल्याणीप्रधाना इमे । अपूरणीति किम् । कल्याणी पञ्चमी यासां ताः कल्याणीपञ्चमा रात्रयः । कल्याणीदशमाः ॥

वा०—प्रधानपूरणीग्रहणं कर्त्तव्यम् ॥

इह माभूत् । कल्याणपञ्चमीकः पक्ष इति । अप्रियादिष्विति किम् । कल्याणीप्रियः ॥

दिङ् नामान्यन्तराले ॥ २ । २ । २६ ॥

जो अन्तराल अर्थ में दिक् नाम सुबन्त शब्द, सुबन्त के साथ समास को प्राप्त हों सो बहुव्रीहि समास है । मध्य कोण को अन्तराल कहते हैं दक्षिणस्याश्च पूर्वस्याश्च दिशोर्यदन्तरालं दिक् सा दक्षिणपूर्वा दिक् । पूर्वोत्तरा । उत्तरपश्चिमा । पश्चिमदक्षिणा ॥

संख्ययाऽव्ययासन्नादूराधिकसंख्याः संख्येये ॥ २ । २ । २५ ॥

जो संख्येय में वर्त्तमान अव्यय, आसन्न, दूर, अधिक और संख्या, सुबन्त के साथ समास पावे वह समास बहुव्रीहि हो (अव्यय) दशानां समीपे उपदशाः । उपविंशाः । आसन्नदशाः । अदूरभागा वृत्ताः । अधिकविंशाः । (संख्या) द्वौ वा त्रयो वा द्वित्राः । त्रिचतुराः । द्विदशाः । संख्ययेति किम् । पञ्च ब्राह्मणाः । अव्ययासन्नादूराधिकसंख्या इति किम् । ब्राह्मणाः पञ्च । संख्येय इति किम् । अधिका विंशतिर्गवाम् ॥

बहुव्रीहौ संख्येये डजबहुगणात् ॥ ५ । ४ । ७३ ॥

जो संख्येय में वर्त्तमान बहुव्रीहि उस से समासान्त डच् प्रत्यय हो । जैसे—उपदशाः । उपविंशाः । उपत्रिंशाः । आसन्नदशाः । अदूरदशाः । संख्येय इति किम् । चित्रगुः । शबलगुः । अबहुगणादिति किम् । उपबहवः । उपगणाः ॥

वा०—डच् प्रकरणे संख्यायास्तत्पुरुषस्योपसंख्यानं कर्त्तव्यम् ॥

निस्त्रिंशाद्यर्थम् । निर्गतानि त्रिंशतः । निस्त्रिंशानि वर्षाणि देवदत्तस्य । निश्चत्वारिंशानि यज्ञदत्तस्य । निर्गतस्त्रिंशताङ्गुलिभ्यो निस्त्रिंशः खड्गः ॥

तत्र तेनेदमिति सरूपे ॥ २ । २ । २७ ॥

इदम् अर्थ में सप्तम्यन्त सरूप और तृतीयान्त सरूप, सुबन्त के साथ समास पावे सो बहुव्रीहि हो ॥

इच् कर्मव्यतिहारे ॥ ५ । ४ । १२७ ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्म के व्यतिहार अर्थ में जो बहुव्रीहि उस से समासान्त इच् प्रत्यय हो। और तिष्ठद्गुप्रभृति में इच् पढ़ा भी है इसलिये अव्यय जानना। केशेषु केशेषु गृहीत्वा इदं युद्धं प्रवृत्तं केशाकेशि। दण्डैर्दण्डैः प्रहृत्येदं युद्धं प्रवर्त्तते तत् दण्डादण्डि॥

अन्येषामपि दृश्यते ॥ ६ । ३ । १३७ ॥

जिस शब्द को दीर्घादेश विधान कहीं न किया हो उस को दीर्घत्व इस सूत्र से जानिये। केशाकेशि। दण्डादण्डि। इत्यादि॥

द्विदण्ड्यादिभ्यश्च ॥ ५ । ४ । १२८ ॥

इच् प्रत्ययान्त द्विदण्डि, द्विमुसली इत्यादि निपातन किये हैं॥

तेन सहेति तुल्ययोगे । २ । २ । २८ ॥

तुल्य योग अर्थ में सह शब्द तृतीयान्त सुबन्त के साथ समास पावे सो बहुव्रीहि हो॥

वोपसर्जनस्य ॥ ६ । ३ । ८२ ॥

जो उपसर्जन अर्थ में वर्त्तमान सह शब्द उस को स आदेश विकल्प करके हो। पुत्रेण सहागतः पिता। सपुत्रः। सहपुत्रः। सच्छात्र आचार्यः। सहच्छात्रो वा। सकर्मकरः। सहकर्मकरो वा। तुल्ययोग इति किम्। सहैव दशभिः पुत्रैर्भारं वहति गर्दभी उपसर्जनस्येति किम्। सहकृत्वा। सहयुध्वा॥

प्रकृत्याशिष्यगोवत्सहलेषु ॥ ६ । ३ । ८३ ॥

आशीर्वाद अर्थ में उत्तरपद परे हो तो गो, वत्स और हल इन को वर्ज के सह शब्द प्रकृति करके रहे अर्थात् स आदेश न हो। स्वस्ति देवदत्ताय। सह पुत्राय। सह च्छात्राय। सहामात्याय। आशिषीति किम्। सानुगाय दस्यवे दण्डं दद्यात्। सहानुगाय वा। अगोवत्सहलेष्विति किम्। स्वस्ति भवते सहगवे। सगवे। सहवत्साय। सवत्साय। सहहलाय। सहलाय। वोपसर्जनस्येति पक्षे भवत्येव सभावः॥

समानस्य छन्दस्य मूर्द्धप्रभृत्युदर्केषु ॥ ६ । ३ । ८४ ॥

जो मूर्द्ध प्रभृति और उदर्क वर्जित उत्तर पद परे हो तो समान शब्द को स आदेश हो। अनुभ्राता सगर्भ्यः। अनुसखा सयूथ्यः। अमूर्द्धप्रभृत्युदर्केष्विति किम्। समानमूर्द्धा। समानप्रभृतयः। समानोदर्काः॥

बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच् ॥ ५ । ४ । ११३ ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुव्रीहि समास में स्वाङ्गवाची सक्थि और अक्षि शब्द से समासान्त षच् प्रत्यय हो, जैसे—दीर्घसक्थः। कल्याणाक्षः। लोहिताक्षः। जो स्त्री हो तो षित् होने से ङीष् प्रत्यय होता है। दीर्घसक्थी। कल्याणाक्षी। इत्यादि। बहुव्रीहाविति किम्। परमसक्थि। परमाक्षि। सक्थ्यक्ष्णोरिति किम्। दीर्घजानुः। सुबाहुः। स्वाङ्गादिति किम् दीर्घसक्थि शकटम्। स्थूलाक्षिरिक्षुः॥

अङ्गुलेर्दारुणि ॥ ५। ४। ११४॥

दारु अर्थ में अङ्गुलि शब्दान्त बहुव्रीहि समास से समासान्त षच् प्रत्यय हो। द्वे अङ्गुली यस्य द्व्यङ्गुलम्। त्र्यङ्गुलम्। चतुरङ्गुलं दारु। दारुणीति किम्। पञ्चाङ्गुलिर्हस्तः॥

द्वित्रिभ्यां ष मूर्ध्नः ॥ ५। ४। ११५॥

द्वि और त्रि से परे मूर्द्धन् शब्द से बहुव्रीहि समास में समासान्त ष प्रत्यय हो। जैसे—द्विमूर्द्धः। त्रिमूर्द्धः। द्वित्रिभ्यामिति किम्। उच्चैर्मूर्द्धा॥

अप्पूरणीप्रमाण्योः ॥ ५। ४। ११६॥

जो पूरण प्रत्ययान्त और प्रमाणी शब्दान्त बहुव्रीहि उस से समासान्त अप् प्रत्यय हो। जैसे—कल्याणी पञ्चमी यासां रात्रीणाम् ताः कल्याणीपञ्चमा रात्रयः। कल्याणीदशमा रात्रयः। स्त्रीप्रमाणी येषां ते स्त्रीप्रमाणाः कुटुम्बिनः। भार्याप्रधाना इत्यर्थः॥

वा०—प्रधानपूरणीग्रहणं कर्त्तव्यम् ॥

इह माभूत्। कल्याणीपञ्चमी अस्मिन् पक्षे कल्याणपञ्चमीकः॥

वा०—नेतुर्नक्षत्र उपसंख्यानम् ॥

मृगो नेता आसां रात्रीणां ता मृगनेत्रा रात्रयः। पुष्यनेत्राः। नक्षत्र इति किम्। देवदत्तनेतृकाः॥

वा०—छन्दसि च नेतुरुपसंख्यानम् ॥

विद्याधर्मनेत्रा देवाः। सोमनेत्राः॥

वा०—मासात्प्रत्ययपूर्वपदात् ठञ्विधिः ॥

पञ्चको मासोऽस्य पञ्चकमासिकः। कर्मकाराः। दशकमासिकाः॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तर्बहिर्भ्यां च लोम्नः ॥ ५ । ४ । ११७ ॥

अन्तर् और बहिस् शब्द से परे जो लोमन् शब्द तदन्त बहुव्रीहि से समासान्त अप् प्रत्यय हो । जैसे—अन्तर्गतानि लोमान्यस्यान्तर्लोमः प्रावारः । बहिर्गतानि लोमान्यस्य स बहिर्लोमः पटः ॥

अच् नासिकायाः संज्ञायां नसं चास्थूलात् ॥ ५ । ४ । ११८ ॥

नासिकान्त बहुव्रीहि समास से अच् प्रत्यय हो और संज्ञा अर्थ में नासिका के स्थान में नस् आदेश हो । द्रुरिव नासिकाऽस्य द्रुणसः । वार्ध्रीणसः । गोनसः । संज्ञायामिति किम् । तुङ्गनासिकः । अस्थूलादिति किम् । अस्थूलनासिको वराहः ॥

खुरखराभ्यां नस् वक्तव्यः ॥

खुरणा । खरणा । पक्ष में अच् प्रत्यय भी इष्ट है । खुरणसः । खरणसः ॥

उपसर्गाच्च ॥ ५ । ४ । ११९ ॥

उपसर्ग से परे जो नासिका शब्द तदन्त बहुव्रीहि से समासान्त अच् प्रत्यय हो और नासिका को नस् आदेश भी हो । जैसे—उन्नता नासिका अस्य स उन्नसः । प्रगता नासिका अस्य प्रणसः ॥

वा०—वेर्ग्रो वक्तव्यः ॥

वि पूर्वक नासिका के स्थान में ग्र आदेश और अच् प्रत्यय भी हो । विगता नासिका अस्य स विग्रः ॥

सुप्रातसुश्वसुदिवशारिकुक्षचतुरश्रैणीपदाजपदप्रोष्ठपदाः ॥ ५ । ४ । १२० ॥

इस में सुप्रात इत्यादि बहुव्रीहि समास और अच् प्रत्ययान्त निपातन किये हैं । जैसे—शोभनं प्रातरस्य स सुप्रातः । शोभनं श्वोऽस्य सुश्वः । शोभनं दिवा अस्य सुदिवः । शारिरिव कुक्षिरस्य शारिकुक्षः । चतस्रोऽश्रयोऽस्य स चतुरश्रः । एण्या इव पादावस्य एणीपदः । अजस्येव पादावस्य अजपदः । प्रोष्ठो गौस्तस्येव पादावस्य प्रोष्ठपदः ॥

नञ्दुःसुभ्यो हलिसक्थ्योरन्यतरस्याम् ॥ ५ । ४ । १२१ ॥

नञ् दुस् और सु इन से परे जो हलि और सक्थि तदन्त बहुव्रीहि से

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समासान्त अच् विकल्प करके हो । जैसे—अविद्यमाना हलिरस्य अहलः । अहलिः । दुर्हलः । दुर्हलिः । सुहलः । सुहलिः । अविद्यमानं सक्थ्यस्य असक्थः । असक्थिः । दुःसक्थः । दुःसक्थिः । सुसक्थः । सुसक्थिः ।

नित्यमसिच् प्रजामेधयोः ॥ ५ । ४ । १२२ ॥

नञ् दुस् और सु से परे जो प्रजा और मेधा तदन्त बहुव्रीहि से नित्यही समासान्त असिच् प्रत्यय हो । जैसे—अविद्यमाना प्रजाऽस्य अप्रजाः । दुष्प्रजाः । सुप्रजाः । अविद्यमाना मेधाऽस्य अमेधाः । दुर्मेधाः । सुमेधाः । नित्य ग्रहण इसलिये है कि पूर्वसूत्र के विकल्प से दो प्रयोग न हों ॥

बहुप्रजाश्छन्दसि ॥ ५ । ४ । १२३ ॥

बहुप्रजाः । यह वेद में निपातन किया है । छन्दसीति किम् । बहुप्रजो ब्राह्मणः ।

धर्मादनिच् केवलात् ॥ ५ । ४ । १२४ ॥

केवल अर्थात् एकही शब्द से परे जो धर्म शब्द उस से समासान्त अनिच् प्रत्यय हो । जैसे—कल्याणो धर्मोऽस्य । कल्याणधर्मा । प्रियधर्मा । केवलादिति किम् । परमः स्वो धर्मोऽस्य । परमस्वधर्मः ॥

जम्भासुहरिततृणसोमेभ्यः ॥ ५ । ४ । १२५ ॥

सु, हरित, तृण और सोम शब्द से परे यह जम्भा शब्द निपातन किया है। जम्भा नाम मुख्य दांतों का और खाने योग्य वस्तु का भी है । शोभनो जम्भोऽस्य सुजम्भा देवदत्तः । हरितजम्भा । तृणजम्भा । सोमजम्भा ॥

दक्षिणेर्मा लुब्धयोगे ॥ ५ । ४ । १२६ ॥

दक्षिणेर्मा समासान्त निपातन किया है। लुब्धयोग अर्थ में । लुब्धनाम व्याध का है । दक्षिणेर्मं व्रणमस्य दक्षिणेर्मा मृगः । ईर्मं व्रणमुच्यते । * दक्षिणमङ्गं व्रणितमस्य व्याधेनेत्यर्थः । लुब्धयोग इति किम् । दक्षिणेर्मं शकटम् ॥

प्रसंभ्यां जानुनोर्ज्ञुः ॥ ५ । ४ । १२९ ॥

* जिस मृग के दक्षिण पार्श्व में बाण आदि से क्षत किया हो उस को दक्षिणेर्मा कहते हैं क्योंकि ईर्म क्षत का नाम है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्र और सम् से परे जानु शब्द को समासान्त ज्ञु आदेश हो । जैसे—प्रकृष्टे संसृष्टे च जानुनी अस्य प्रज्ञुः । संज्ञुः ॥

ऊर्ध्वाद् विभाषा ॥ ५ । ४ । १३० ।

ऊर्ध्व शब्द से परे जानु शब्द को विकल्प करके ज्ञु आदेश हो । जैसे—ऊर्ध्वे जानुनी अस्य । ऊर्ध्वज्ञुः । ऊर्ध्वजानुः ॥

ऊधसोऽनङ् ॥ ५ । ४ । १३१ ॥

ऊधस् * शब्दान्त बहुव्रीहि को समासान्त अनङ् आदेश हो । जैसे-कुण्डमिवोधोऽस्याः कुण्डोध्नी । घटोध्नी गौः ॥

वा०—ऊधसोऽनङि स्त्रीग्रहणं कर्त्तव्यम् ॥

इह माभूत् । महोधाः । पर्जन्यः । घटोधो धैनुकम् ॥

धनुषश्च ॥ ५ । ४ । १३२ ॥

धनुष् शब्दान्त बहुव्रीहि को अनङ् आदेश हो । जैसे † शार्ङ्गं धनुरस्य शार्ङ्गधन्वा । गाण्डीवधन्वा । पुष्पधन्वा । अधिज्यधन्वा ॥

वा संज्ञायाम् ॥ ५ । ४ । १३३ ॥

संज्ञाविषय में धनुःशब्दान्त बहुव्रीहि को विकल्प करके अनङ् आदेश हो । जैसे—‡ शतधनुः । शतधन्वा । दृढधनुः । दृढधन्वा ॥

जायाया निङ् ॥ ५ । ४ । १३४ ॥

जायान्त बहुव्रीहि को समासान्त निङ् आदेश हो । युवतिर्जायाऽस्य । युवजानिः । वृद्धजानिः ॥

गन्धस्येदुत्पूतिसुसुरभिभ्यः ॥ ५ । ४ । १३५ ॥

उत्, पूति, सु और सुरभि शब्दों से परे गन्ध शब्द को समासान्त इत् आदेश हो ।

---

* थनों के ऊपर जो दूध का स्थान अर्थात् एन है उस को ऊधस् कहते हैं ॥

† शार्ङ्ग आदि धनुष् के विशेष नाम हैं ॥

‡ शतधनु आदि किसी पुरुष विशेष के नाम हैं ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्गतो गन्धोऽस्य उद्गन्धिः । पूतिगन्धिः । सुगन्धिः । सुरभिगन्धिः । एतेभ्य इति किम् । तीव्रगन्धो वातः ॥

वा०—गन्धस्येत्त्वे तदेकान्तग्रहणम् ॥

गन्ध शब्द को इत्त्व विधान में उसी का अवयव हो तो इत्त्व होता है यहां नहीं होता * शोभनो गन्धोऽस्य सुगन्ध आपणः ॥

अल्पाख्यायाम् ॥ ५ । ४ । १३६ ॥

अल्प अर्थ में वर्त्तमान बहुव्रीहि समासान्त गन्ध शब्द को इत् आदेश हो । जैसे—सूपोऽल्पोऽस्मिन् सूपगन्धि भोजनम् । अल्पमस्मिन् भोजनं घृतं घृतगन्धि । क्षीरगन्धि । तैलगन्धि । दधि गंधि । तक्रगन्धि । इत्यादि ॥

उपमानाच्च ॥ ५ । ४ । १३७ ॥

उपमान वाची से परे गन्ध शब्द को इत् आदेश हो । पद्मस्येव गन्धोऽस्य पद्मगन्धि । उत्पलस्येव गन्धोऽस्य पुष्पस्य तदुत्पलगन्धि । करीषगन्धि । कुमुदगन्धि ॥

पादस्य लोपोऽहस्त्यादिभ्यः ॥ ५ । ४ । १३८ ॥

बहुव्रीहि समास में हस्ति आदि शब्दों को छोड़ के उपमान वाची शब्द से परे पाद शब्द के अकार का लोप हो । व्याघ्रस्येव पादावस्य शुनः स व्याघ्रपात् । सिंहपात् । अहस्त्यादिभ्य इति किम् । हस्तिपादः । कटोलपादः ॥

कुम्भपदीषु च ॥ ५ । ४ । १३९ ॥

कुंभपदी आदि शब्दों में पद शब्द के अकार का लोप निपातन से किया है । कुंभपदी । शतपदी । अष्टापदी । इत्यादि ॥

संख्यासुपूर्वपदस्य च ॥ ५ । ४ । १४० ॥

बहुव्रीहि समास में संख्या और सु पूर्वक पाद शब्द के अकार का लोप हो । द्वौ पादावस्य द्विपात् । त्रिपात् । चतुष्पात् । शोभनौ पादावस्य सुपात् ॥

---

* गन्ध शब्द सामान्य से गुण का नाम है सो जहां इस शब्द को द्रव्य की विवक्षा न हो वहीं इत् आदेश हो और जहां विशेष द्रव्य की विवक्षा में अन्य पदार्थ समास हो वहां इत् आदेश न हो । जैसे—सुगन्ध आपणः । सुन्दर गन्धयुक्त दुकान ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वयसि दन्तस्य दतृ ॥ ५ । ४ । १४१ ॥

संख्या और सुपूर्वक बहुव्रीहिसमासान्त दन्त शब्द को दतृ आदेश हो । द्वौ द-न्तावस्य द्विदन् । त्रिदन् । चतुर्दन् । शोभना दन्ता अस्य सुदन् कुमारः । वयसीति किम् । द्विदन्तो कुञ्जरः ॥

छन्दसि च ॥ ५ । ४ । १४२ ॥

वेद में बहुव्रीहि समासान्त दन्त शब्द को दतृ आदेश हो । जैसे—पत्रदन्तमा-लभेत । उभयदत आलभते ॥

स्त्रियां संज्ञायाम् ॥ ५ । ४ । १४३ ॥

जहां स्त्री की संज्ञा करना हो वहां बहुव्रीहि समासान्त दन्त शब्द को दतृ आदेश हो । अयोदती । फालदती । संज्ञायामिति किम् । समदन्ती । स्निग्धदन्ती ॥

विभाषा श्यावारोकाभ्याम् ॥ ५ । ४ । १४४ ॥

श्याव और अरोक शब्द से परे बहुव्रीहि समासान्त दन्त शब्द को विकल्प करके दतृ आदेश हो । श्यावा दन्ता अस्य श्यावदन् । श्यावदन्तः । अरोकदन् । अरो-कदन्तः । अरोक नाम दीप्तिरहित ॥

अग्रान्तशुद्धशुभ्रवृषवराहेभ्यश्च ॥ ५ । ४ । १४५ ॥

अग्रान्त शब्द, शुद्ध, शुभ्र, वृष और वराह इन से परे बहुव्रीहि समासान्त दन्त श-ब्द को विकल्प करके दतृ आदेश हो । जैसे—कुड्मलाग्रमिव दन्ता अस्य कुड्मलाग्रदन् । कुड्मलाग्रदन्तः । शुद्धदन् । शुद्धदन्तः । शुभ्रदन् । शुभ्रदन्तः । वृषदन् । वृषदन्तः । वराहदन् । वराहदन्तः ॥

ककुदस्यावस्थायां लोपः ॥ ५ । ४ । १४६ ॥

अवस्था अर्थ में वर्तमान बहुव्रीहि समासान्त ककुद् शब्द के अन्त का लोप हो । असंजातककुत् वत्सः । बाल इत्यर्थः । उन्नतककुत् । वृद्धवया वृष इत्यर्थः । स्थूलककुत् । बलवानित्यर्थः । अवस्थायामिति किम् । श्वेतककुदः ॥

त्रिककुत् पर्वते ॥ ५ । ४ । १४७ ॥

पर्वत अर्थ में त्रिककुत् निपातन किया है । त्रीणि ककुदान्यस्य त्रिककुत् पर्वतः । पर्वत इति किम् । त्रिककुदोऽन्यः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्विभ्यां काकुदस्य ॥ ५ । ४ । १४८ ॥

उत् और विपूर्वक बहुव्रीहि समासान्त जो काकुद् शब्द उस के अन्त का लोप हो । उद् गतं काकुदमस्य उत्काकुत् । विकाकुत् । तालु काकुदमुच्यते ॥

पूर्णाद्विभाषा ॥ ५ । ४ । १४९ ॥

पूर्ण शब्द से पर बहुव्रीहि समासान्त जो काकुद् उस के अन्त का लोप विकल्प करके हो पूर्णकाकुत् । पूर्णकाकुदः ॥

सुहृद्दुर्हृदौ मित्रामित्रयोः ॥ ५ । ४ । १५० ॥

सुहृद् और दुर्हृद् निपातन मित्र और अमित्र अर्थों में किये हैं । शोभनं हृदयमस्य सुहृन्मित्रम् । दुष्टं हृदयमस्य दुर्हृद्मित्रः । मित्रामित्रयोरिति किम् । सुहृदयः कारुणिकः । दुर्हृदयश्चोरः ॥

उरःप्रभृतिभ्यः कप् ॥ ५ । ४ । १५१ ॥

उरस् आदि शब्द जिस के अन्त में हों उस बहुव्रीहि समास से समासान्त कप् प्रत्यय हो । जैसे—व्यूढमुरोऽस्य । व्यूढोरस्कः । प्रियसर्पिष्कः । अवमुक्तोपानत्कः ॥

इनः स्त्रियाम् ॥ ५ । ४ । १५२ ॥

इन् प्रत्ययान्त बहुव्रीहि समास से समासान्त कप् प्रत्यय हो । बहवो दण्डिनोऽस्यां शालायां बहुदाण्डिका शाला । बहुच्छात्रिका । बहुस्वामिका नगरी । बहुवाग्मिका सभा । स्त्रियामिति किम् । बहुदण्डी * । बहुदाण्डिको वा राजा ॥

नद्यृतश्च ॥ ५ । ४ । १५३ ॥

नद्यन्त और ऋकारान्त बहुव्रीहि समास से कप् प्रत्यय हो । जैसे—बह्व्यः कुमार्योऽस्यां शालायां सा बहुकुमारीका शाला । बहुब्रह्मबन्धूको देशः (ऋतः) बहवः कर्त्तारोऽस्य बहुकर्त्तृको यज्ञः ॥

न संज्ञायाम् ॥ ५ । ४ । १५५ ॥

---

* यहां शेषाद्विभाषा इस सूत्र से शेष अविहित समासान्त शब्दों से विकल्प करके कप् प्रत्यय हो जाता है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुव्रीहि समास से संज्ञा विषय में समासान्त कप् प्रत्यय न हो। विश्वं यशोऽस्य स विश्वयशाः ॥

ईयसश्च ॥ ५ । ४ । १५६ ॥

ईयसन्त बहुव्रीहि समास से कप् प्रत्यय न हो। बहवः श्रेयांसोऽस्य बहुश्रेयान्। बह्वयः श्रेयस्योऽस्य बहुश्रेयसी। ह्रस्वत्वमपि न भवति। ईयसो बहुव्रीहौ पुंवदिति वचनात्॥

वन्दिते भ्रातुः ॥ ५ । ४ । १५७ ॥

प्रशंसा अर्थ में भ्रातृ शब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त कप् प्रत्यय न हो। शोभनो भ्राताऽस्य। सुभ्राता। वन्दित इति किम्। मूर्खभ्रातृकः। दुष्टभ्रातृकः॥

ऋतश्छन्दसि ॥ ५ । ४ । १५८ ॥

वैदिक प्रयोग विषय में ऋकारान्त बहुव्रीहि समास से कप् प्रत्यय न हो। पण्डिता माताऽस्य स पण्डितमाता। विद्वान्पिताऽस्य स विद्वत्पिता। विदुषी स्वसाऽस्य स विद्वत्स्वसा सुहोता॥

नाडीतन्त्र्योः स्वाङ्गे ॥ ५ । ४ । १५९ ॥

स्वाङ्गवाची नाडी और तन्त्री शब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त कप् प्रत्यय न हो। बह्वयः नाड्योऽस्य। बहुनाडिः कायः। बहुतन्त्री ग्रीवा। स्वाङ्ग इति किम्। बहुनाडीकः स्तम्भः। बहुतन्त्रीका वीणा॥

निष्प्रवाणिश्च ॥ ५ । ४ । १६० ॥

प्रवाणीनाम कोरी की शलाई का है। निर्गता प्रवाणी यस्मात्स निष्प्रवाणिः पटः। निष्प्रवाणिः कम्बलः। प्रत्यग्र इत्यर्थः॥

सप्तमीविशेषणे बहुव्रीहौ ॥ २ । २ । ३५ ॥

बहुव्रीहि समास में सप्तम्यन्त और विशेषण पद का पूर्वनिपात हो। सप्तमी। जैसे—कण्ठेकालः। उरसिलोमा। विशेषण। चित्रगुः। शबलगुः॥

वा०—सर्वनामसंख्ययोरुपसंख्यानम्॥

सर्वनाम और संख्यावाची शब्दों का पूर्वनिपात हो। सर्वश्वेतः। सर्वकृष्णः। द्विशुक्लः। द्विकृष्णः। विश्वदेवः। विश्वयशाः। द्विपुत्रः। द्विभार्यः। अथ यत्र संख्या सर्वनामयोरेव बहुव्रीहिः। कस्य तत्र पूर्वनिपातेन भवितव्यम्। परत्वात् संख्यायाः। द्व्यन्यः। त्र्यन्यः॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०—वा प्रियस्य पूर्वनिपातो भवतीति वक्तव्यम् ॥

प्रिय शब्द का विकल्प करके पूर्वनिपात हो । प्रियधर्मः । धर्मप्रियः ॥

वा०—सप्तम्याः पूर्वनिपाते गड्वादिभ्यः परवचनम् ॥

बहुब्रीहि समास में सप्तम्यन्त शब्दों का पूर्वनिपात (सप्तमी वि०) इस सूत्र से कर चुके हैं सो गडु आदि शब्दों में न हो अर्थात् परनिपात हो । जैसे—गडुकण्ठः । गडुशिराः ॥

निष्ठा ॥ २ । २ ॥ ३६ ॥

निष्ठान्त शब्द का प्रयोग बहुब्रीहि समास में पूर्व हो, अधीता विद्या येन अधीतविद्यः । प्रक्षालितहस्तपादः । कृतकटः । कृतधर्मः । कृतार्थः । संशितव्रतः ॥

वा०—निष्ठायाः पूर्वनिपाते जातिकालसुखादिभ्यः परवचनम् ॥

जहां निष्ठान्त शब्दों का पूर्वनिपात किया है वहां जातिवाची कालवाची और सुखादि शब्दों का पूर्वनिपात न हो अर्थात् परप्रयोग किया जावे । जैसे— शार्ङ्गजग्धी । पलाण्डुभक्षिती । मासजातः । संवत्सरजातः । सुखजातः । दुःखजातः ॥

वा०—प्रहरणार्थेभ्यश्च परे निष्ठासप्तम्यौ भवत इति वक्तव्यम् ॥

शस्त्रवाची शब्दों से परे निष्ठान्त और सप्तम्यन्त शब्द होने चाहियें, असिरुद्यतो येन अस्युद्यतः । मुसलोद्यतः । दण्डपाणिः ॥

वाहिताग्न्यादिषु ॥ २ । २ । ३७ ॥

बहुब्रीहि समास में आहिताग्नि इत्यादि शब्दों में निष्ठान्त का पूर्वनिपात विकल्प करके हो । अग्निराहितो येन अग्न्याहितः आहिताग्निः । जातपुत्रः पुत्रजातः । जातदन्तः दन्तजातः । इत्यादि ॥

॥ अब इस के आगे द्वन्द्वसमास का प्रकरण है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ उभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः * ॥

चार्थे द्वन्द्वः ॥ २ । २ । २६ ॥

जो चकार के अर्थ में वर्त्तमान अनेक सुबन्त, वे सुबन्त के साथ समास पावें सो द्वन्द्वसंज्ञकसमास हो । चकार के चार अर्थ हैं, समुच्चय, अन्वाचय, इतरेतर और समाहार । सो समुच्चय । और अन्वाचय इन अर्थों में असमर्थ होने से समास नहीं हो सकता और इतरेतर तथा समाहार अर्थों में द्वन्द्व समास हो, प्लक्षश्च न्यग्रोधश्च तौ प्लक्षन्यग्रोधौ । धवश्च खदिरश्च पलाशश्च ते धवखदिरपलाशाः ॥

द्वन्द्वाच्चुदषहान्तात्समाहारे ॥ ५ । ४ । ७ ॥

जो द्वन्द्व समाहार अर्थ में वर्त्तमान हो तो चवर्गान्त दान्त और हान्त द्वन्द्व समास से समासान्त टच् प्रत्यय हो । जैसे—वाक् च त्वक् च अनयोः समाहारः वाक्त्वचम् । स्रक् च त्वक् च स्रक्त्वचम् । श्रीश्च स्रक् च श्रीस्रजम् । इडूर्जम् । वागूर्जम् । समिधश्च दृषदश्च समिद्दृषदम् । संपद्विपदम् । वाग्विप्रुषम् । छत्रोपानहम् । धेनुगोदुहम् । द्वन्द्वादिति किम् । तत्पुरुषान्मा भूत् । पञ्चवाचः समाहृताः पञ्चवाक् । चुदषहान्तादिति किम् । वाक्समित् ॥

उपसर्जनं पूर्वम् ॥ २ । २ । ३० ॥

सब समासों में उपसर्जनसंज्ञक का पूर्व प्रयोग करना चाहिये । कष्टं श्रितः कष्टश्रितः । शङ्कुलाखण्डः इत्यादि ॥

राजदन्तादिषु परम् ॥ २ । २ । ३१ ॥

सब समासों में राजदन्त आदि शब्दों का परे प्रयोग होता है । दन्तानां राजा राजदन्तः । अग्रेवणम् । लिप्तवासितम् ॥

द्वन्द्वे घि ॥ २ । २ । ३२ ॥

द्वन्द्व समास में घिसंज्ञक शब्द का पूर्वनिपात होता है । पटुश्च गुप्तश्च पटुगुप्तौ ॥

वा०—अनेकप्राप्तावेकस्य नियमः शेषेष्वनियमः ॥

जहां अनेक घिसंज्ञकों का पूर्वनिपात प्राप्त हो वहां एक घिसंज्ञक पूर्व प्रयोक्तव्य है । और जो शेष रहें उन में कुछ नियम नहीं है । पटुमृदुशुक्लाः । पटुशुक्लमृदवः ॥

---

* द्वन्द्व समास में पूर्व पर सब शब्दों के अर्थ प्रधान रहते हैं ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०—ऋतुनक्षत्राणामानुपूर्व्येण समानाक्षराणां पूर्वनिपातो वक्तव्यः ॥

ऋतु और नक्षत्र जिस क्रम से पढ़े लिखे और समझे जाते हैं उनका उसी क्रम से पूर्वनिपात होना चाहिये। जैसे—शिशिरवसन्तावुदगयनस्थौ। कृत्तिकारोहिण्यः। चित्रास्वाती ॥

वा०—अभ्यर्हितं पूर्वं निपततीति वक्तव्यम् ॥

जहां पूर्वापरनियमपठित शब्द हों उन और जहां साध्य और साधनवाची शब्दों का समास किया जाय वहां पूर्वापरनियमित शब्द और साधनवाची शब्दों का पूर्वनिपात होता है। ऋग्यजुसामाथर्वाणो वेदाः। इत्यादि। माता च पिता च मातापितरौ। श्रद्धा च मेधा च श्रद्धामेधे। दीक्षा च तपश्च दीक्षातपसी ॥

वा०—लघ्वक्षरं पूर्वं निपततीति वक्तव्यम् ॥

जिस पद में थोड़ी मात्रा हों उस पद का द्वन्द्वसमास में पूर्वनिपात होता है। कुशाश्च काशाश्च कुशकाशम्। शरचापम्। शरशार्दम्। अपर आह ॥

वा०—सर्वत एवाभ्यर्हितं पूर्वं निपततीति वक्तव्यम्। लघ्वक्षरादपीति ॥

किन्हीं आचार्यों का ऐसा मत है कि सब विधियों का अपवाद होके अभ्यर्हित का ही पूर्वनिपात होना चाहिये। जैसे—दीक्षातपसी। श्रद्धातपसी ॥

वा०—वर्णानामानुपूर्व्येण पूर्वनिपातो भवतीति वक्तव्यम् ॥

ब्राह्मण आदि वर्णों का यथाक्रम पूर्व निपात जानना चाहिये। ब्राह्मणक्षत्रियविट्शूद्राः ॥

वा०—भ्रातुश्च ज्यायसः पूर्वनिपातो भवतीति वक्तव्यम् ॥

द्वन्द्व समास में बड़े भाई का पूर्व निपात होता है। युधिष्ठिरार्जुनौ। रामलक्ष्मणौ ॥

वा०—संख्याया अल्पीयस्याः पूर्वनिपातो भवतीति वक्तव्यम् ॥

द्वन्द्वसमास में अल्पसंख्यावाची शब्दों का पूर्वनिपात होता है। एकादश। द्वादश। द्वित्राः। त्रिचतुराः। नवतिशतम् ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०-धर्मादिषूभयं पूर्वं निपततीति वक्तव्यम् ॥

धर्म आदि शब्दों में दोनों पदों का पूर्वनिपात होता है । धर्मार्थौ अर्थधर्मौ । कामार्थौ अर्थकामौ । गुणवृद्धि वृद्धिगुणौ । आद्यन्तौ अन्तादी ॥

अजाद्यदन्तम् ॥ २ । २ । ३४ ॥

जिस के आदि में अच् और अकार अन्त में हो उस पद का पूर्वनिपात होता है । उष्ट्रखरौ । ईशकेशवौ । इन्द्रामौ । द्वन्द्वे घ्यजाद्यदन्तं विप्रतिषेधेन । जहां अजादि अदन्त और घिसंज्ञक का द्वन्द्व समास हो वहां अजादि अदन्त का पूर्वनिपात होता है । जैसे—इन्द्राग्नी । इन्द्रवायू । तपरकरणं किम् । अश्वावृषौ । वृषाश्वे ॥

द्वन्द्वश्च प्राणितूर्य्यसेनाङ्गानाम् ॥ २ । ४ । २ ॥

प्राणि तूर्य * और सेना के अङ्गोंका जो द्वन्द्वसमास सो एकवचन हो (प्राण्यङ्ग) पाणी च पादौ च पाणिपादम् । शिरोग्रीवम् (तूर्याङ्ग) मार्दङ्गिकपाणविकम् । वीणावादकपरिवादकम् (सेनाङ्ग) रथिकाश्वारोहम् । रथिकपादातम् ॥

अनुवादे चरणानाम् ॥ २ । ४ । ३ ॥

अनुवाद † अर्थ में चरणवाची सुबन्तों का जो द्वन्द्व समास सो एक वचन होता है । स्थेणोरद्यतन्यां चेति वक्तव्यम् । जहां स्था और इण धातु का लंङ् लकार का प्रयोग हो वहां चरणवाची सुबन्तों का द्वन्द्व एक वचन होता है । उदगात् कठकालापम् । प्रत्यष्ठात् कठकौथुमम् । अनुवाद इति किम् । उदगुः कठकालापाः । प्रत्यष्ठुः कठकौथुमाः । स्थेणोरिति किम् । अनन्दिषुः कठकालापाः । अद्यतन्यामिति किम् । उद्यन्ति कठकालापाः । इस सूत्र में चरण शब्द उन लोगों का नाम है कि जो वेद की शाखाओं के निमित्त अर्थात् जिन के नाम से इस समय भी शाखा प्रसिद्ध हैं । जैसे—कंठ । मुण्डक । चरक । सुश्रुत । इत्यादि ॥

अध्वर्युक्रतुरनपुंसकम् ॥ २ । ४ । ४ ॥

जो क्रतुवाची शब्द नपुंसक न हो तो अध्वर्यु नाम यजुर्वेद में विधान किये

---

* ढोल आदि बाजों का यह नाम है ॥

† अनुवाद उसे कहते हैं जो पूर्व कहे प्रसंग को किसी प्रयोजन के लिये फिर कहना है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रतु नाम यज्ञवाची सुबन्तों का द्वन्द्व समास एकवचन हो । जैसे—अर्काश्वमेधम् । सायान्हातिरात्रम् । अध्वर्युक्रतुरिति किम् । इषुवज्रौ । उद्भिद्बलिभिदौ । अनपुंसकमिति किम् । राजसूयवाजपेये । इह कस्मान्न भवति दर्शपौर्णमासौ । क्रतुशब्दः सोमयज्ञेषु रूढः ॥

अध्ययनतोऽविप्रकृष्टाख्यायाम् ॥ २ । ४ । ५ ॥

जिन ग्रन्थों का पठन पाठन अतिसमीप होता हो उन सुबन्तों का द्वन्द्व समास एकवचन हो । पदकक्रमकम् । क्रमकवार्तिकम् । अष्टाऽध्यायीमहाभाष्यम् । अध्ययनत इति किम् । पितापुत्रौ । अविप्रकृष्टाख्यानामिति किम् । याज्ञिकवैयाकरणौ ॥

जातिरप्राणिनाम् ॥ २ । ४ । ६ ॥

प्राणिवर्जित जातिवाची सुबन्तों का द्वन्द्व समास एकवचन हो । आराशस्त्रि । धानाशष्कुलि । शय्यासनम् । जातिरिति किम् । नन्दकपाञ्चजन्यौ । अप्राणिनामिति किम् । ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्राः ॥

विशिष्टलिङ्गो नदीदेशोऽग्रामाः ॥ २ । ४ । ७ ॥

भिन्न लिङ्ग नदी और भिन्न लिङ्ग देशवाची सुबन्तों का द्वन्द्वसमास एकवचन हो ग्राम छोड़ के । उद्ध्यश्च इरावती च उद्ध्येरावति । गङ्गा च शोणश्च गङ्गाशोणम् । देश । कुरवश्च कुरुक्षेत्रं च कुरुकुरुक्षेत्रम् । कुरुजाङ्गलम् । विशिष्टलिङ्ग इति किम् । गङ्गायमुने । मद्रकेकयाः ॥

वा०—अग्राम इत्यत्र नगराणां प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥

जैसे ग्रामों के द्वन्द्व को एकवचन का निषेध है वैसे नगरों का होना चाहिये, जैसे—मथुरापाटलिपुत्रम् ॥

वा०—उभयतश्च ग्रामाणां प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥

उभयत अर्थात् ग्राम और नगरों का अवश्य जो द्वन्द्वसमास उस को एकवचन न हो । शौर्यं नाम नगरम् केतवता नाम ग्रामः । शौर्यं च केतवता च शौर्यकेतवते । जाम्बवं नगरं । शालूकिनि ग्रामः । जाम्बवशालूकिन्यौ ॥

क्षुद्रजन्तवः ॥ २ । ४ । ८ ॥

नकुलपर्य्यन्ताः क्षुद्रजन्तवः । क्षुद्रजन्तुवाचि सुबन्तों का जो द्वन्द्व समास

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सो एकवचन हो, दशगशकम् । यूकामक्षिकमत्कुणम् । क्षुद्रजन्तव इति किम् । ब्राह्मणक्षत्रियौ ॥

येषां च विरोधः शाश्वतिकः ॥ २ । ४ । ६ ॥

जिन का वैर नित्य हो तद्वाचि सुबन्तों का द्वन्द्व एकवचन हो । मार्जारमूषकम् । अश्वमहिषम् । अहिनकुलम् । श्वशृगालम् । चकार ग्रहण का प्रयोजन यह है कि जब विभाषा वृक्षमृग० । यह सूत्र प्राप्त हो और येषां च विरोध० यह भी तब नित्य ही एकवचन हो । अश्वमहिषम् । काकोलूकम् । शाश्वतिक इति किम् । देवासुराः ॥

शूद्राणामनिरवसितानाम् ॥ २ । ४ । १० ॥

जिन शूद्रों के भोजन करे पीछे मांजे से भी पात्र शुद्ध न हों वे अनिरवसित कहाते हैं अनिरवसित शूद्रों का द्वन्द्व समास एकवचन हो । तक्षायस्कारम् । रजकतन्तुवायम् । अनिरवसितानामिति किम् । चण्डालमृतपाः ॥

गवाश्वप्रभृतीनि च ॥ २ । ४ । ११ ॥

यहां गवाश्वम् इत्यादि शब्द द्वन्द्व समास में एकवचन निपातन किये हैं । गवाश्वम् । गवाविकम् । गवैडकम् । अजाविकम् । अजैडकम् । गवाश्वप्रभृतिषु यथोच्चारितं द्वन्द्ववृत्तं द्रष्टव्यम् । रूपान्तरे तु नायं विधिर्भवतीति * । गोअश्वौ । पशुद्वन्द्व विभाषैव भवति ॥

विभाषा वृक्षमृगतृणधान्यव्यंजनपशुशकुन्यश्ववडवपूर्वापराधरोत्तराणाम् ॥ २ । ४ । १२ ॥

वृक्ष मृग तृण धान्य व्यंजन पशु शकुनि अश्ववडव पूर्वापर अधरोत्तर इन सुबन्तों का द्वन्द्व समास परस्पर विकल्प करके एकवचन हो (वृक्ष) प्लक्षन्यग्रोधं प्लक्षन्यग्रोधाः । (मृग) रुरुपृषतम् । रुरुपृषताः । (तृण) कुशकाशम् । कुशकाशाः (धान्य) व्रीहियवम् । व्रीहियवाः । (व्यञ्जन) दधिघृतम् । दधिघृते (पशु) गोमहिषम् । गोमहिषाः (शकुनि) तित्तिरिकपिञ्जलम् । तित्तिरिकपिञ्जलाः । हंसचक्रवाकम् । हंसचक्रवाकाः । अश्ववडवम् । अश्ववडवौ । पूर्वापरम् । पूर्वापरे । अधरोत्तरम् । अधरोत्तरे ॥

---

* रूपान्तर अर्थात् जिस पक्ष में अवङ् आदेश नहीं होता वहां यह एकवचन विधि नहीं होता ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०--बहुप्रकृतिः फलसेनावनस्पतिमृगशकुनिक्षुद्रजन्तुधान्यतृणानाम् ॥

एषां बहुप्रकृतिरेव द्वन्द्व एकवद्भवति * । न द्विप्रकृतिः । बदरामलके । रथिकाश्वारोहौ । प्लक्षन्यग्रोधौ । रुरुपृषतौ । हंसचक्रवाकौ । यूकालिक्षे । व्रीहियवौ । कुशकाशौ ॥

विप्रतिषिद्धं चानधिकरणवाचि ॥ २ । ४ । १३ ॥

जो भिन्न द्रव्यवाची और परस्पर विरुद्धार्थ सुबन्तों का द्वन्द्व, वह एक वचन विकल्प करके हो । शीतोष्णम् । शीतोष्णे । सुखदुःखम् । सुखदुःखे । जीवितमरणम् । जीवितमरणे । विप्रतिषिद्धमिति किम् । कामक्रोधौ । अनधिकरणवाचिनामिति किम् । शीतोष्णे उदके ॥

न दधिपय आदीनि ॥ २ । ४ । १४ ॥

दधिपय आदि शब्दों का द्वन्द्व एकवचन न हो । दधि च पयश्च ते दधिपयसी । सर्पिर्मधुनी । मधुसर्पिषी । ब्रह्म प्रजापती । शिववैश्रवणौ इत्यादि ॥

अधिकरणैतावत्त्वे च ॥ २ । ४ । १५ ॥

अधिकरणवाची द्वन्द्व समास के एतावत्त्वनाम परिमाण अर्थ में एकवचन हो । चतुस्त्रिंशद्दन्तोष्ठाः । दश मार्दङ्गिकपाणविकाः ॥

विभाषा समीपे ॥ २ । ४ । १६ ॥

अधिकरण के एतावत्त्व के समीप अर्थ में एकवचन विकल्प करके हो । उपदशं दन्तोष्ठं । उपदशा दन्तोष्ठाः । उपदशं मार्दङ्गिकपाणविकं । उपदशा मार्दङ्गिकपाणविकाः ॥

स नपुंसकम् ॥ २ । ४ । १७ ॥

जिस द्विगु और द्वन्द्व को एकवद्भाव विधान किया है सो नपुंसक लिङ्ग होता है (द्विगु) पञ्चगवम् । दशगवम् (द्वन्द्व) पाणिपादम् । शिरोग्रीवम् । इत्यादि ॥

परपद का लिङ्ग प्राप्त हुआ था उसका अपवाद यह सूत्र है

अव्ययीभावश्च ॥ २ । ४ । १८ ॥

---

* बहुप्रकृति अर्थात् जहां बहुवचनान्त शब्दों का द्वन्द्व हो वहीं एकवचन हो) बदरामलके) यहां द्विवचनान्त के होने से एकवचन न हुआ ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अव्ययीभाव समास नपुंसक लिङ्ग हो ॥

वा०-पुण्यसुदिभ्यामन्हः क्लीबतेष्यते ॥

जैसे—पुण्यं च तदहश्च पुण्याहम् । सुदिनाहम् ॥

वा०-पथः संख्याव्ययादेः क्लीवतेष्यते ॥

संख्या और अव्यय जिस के आदि में हो ऐसे पथिन् शब्द को नपुंसक लिङ्ग हो । त्रिपथम् । चतुष्पथम् । विपथम् । सुपथम् ॥

वा०-क्रियाविशेषणानां च क्लीवता वक्तव्या ॥

मृदु पचति । शोभनं पचति ॥

*** सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ ॥ १ । २ । ६४ ॥**

जो तुल्यरूप शब्द हों उन का एकविभक्ति परे हो तो एकशेष तथा अन्य रूपों की निवृत्ति हो । वृक्षश्च वृक्षश्च वृक्षौ । वृक्षश्च वृक्षश्च वृक्षश्च वृक्षाः । इत्यादि बहुत उदाहरण होते हैं । सरूपाणामिति किम् । प्लक्षन्यग्रोधाः । रूपग्रहणं किम् । भिन्नेप्यर्थे यथा स्यात् । अक्षाः । पादाः । माषा इति । एकग्रहणं किम् । द्विबह्वोः शेषो मा भूत् । एकविभक्ताविति किम् । पयः पयो जरयति । वासो वासश्छादयति । ब्राह्मणाभ्यां च कृतम् । ब्राह्मणाभ्यां च देहीति ॥

वृद्धो यूना तल्लक्षणश्चेदेव विशेषः ॥ १ । २ । ६५ ॥

जो तल्लक्षण अर्थात् वृद्धप्रत्ययान्त और युवप्रत्ययान्त ही का विशेष नाम विरूपता हो और मूल प्रकृति समान होवे तो वृद्धनाम गोत्र प्रत्ययान्त शब्द और युव प्रत्ययान्त शब्द का जब एक सङ्ग उच्चारण करें तब वृद्ध शेष रहै और युवा की निवृत्ति हो (उदाहरण) गार्ग्यश्च गार्ग्यायणश्च तौ गार्ग्यौ । वात्स्यश्च वात्स्यायनश्च वात्स्यौ । वृद्ध इति किम् । गर्गश्च गार्ग्यायणश्च गर्गगार्ग्यायणौ । यूनेति किम् । गार्ग्यश्च गर्गश्च गार्ग्यगर्गौ । तल्लक्षण इति किम् । गार्ग्यवात्स्यायनौ । एवकारः किमर्थः । भागवित्तिश्च । भागवित्तिकश्च । भागवित्तिभागवित्तिकौ । कुत्सा और सौवीर ये दो अर्थ भागवित्तिक शब्द में युव प्रत्ययान्त से भी अलग हैं ॥

* यहां से एकशेष द्वन्द्व का प्रकरण चलता है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्री पुंवच्च ॥ १ । २ । ६६ ॥

जब वृद्धा स्त्री और युवा का एकसङ्ग उच्चारण करें तब वृद्धा स्त्री शेष रहे और युवा की निवृत्ति हो । पुंवत् अर्थात् स्त्री को पुल्लिङ्ग के सदृश कार्य्य हो जो तल्लक्षण ही विशेष होवे तो । गार्गी च गार्ग्यायणश्च गार्ग्यौ वात्सी च वात्स्यायनश्च वात्स्यौ । दाक्षी च दाक्षायणश्च दाक्षी ॥

पुमान् स्त्रिया ॥ १ । २ । ६७ ॥

जो तल्लक्षण विशेष होवे तो स्त्री के साथ पुरुष शेष रहे स्त्री निवृत्त हो । जैसे— ब्राह्मणश्च ब्राह्मणी च ब्राह्मणौ । कुक्कुटश्च कुक्कुटी च कुक्कुटौ । यहां तल्लक्षण विशेष इसलिये है कि कुक्कुटश्च मयूरीच कुक्कुटमयूर्य्यौ । यहां एक शेष न होवे । एवकार इसलिये है कि इन्द्रश्च इन्द्राणीचेन्द्रेन्द्राण्यौ । यहां इन्द्राणी शब्द में पुंयोग की आख्या स्त्रीत्व से पृथक् होने के कारण एकशेष न हो ॥

भ्रातृपुत्रौ स्वसृदुहितृभ्याम् ॥ १ । २ । ६८ ॥

भ्रातृ और पुत्र शब्द, यथाक्रम स्वसृ और दुहितृ के साथ शेष रहें । भ्राता च स्वसा च भ्रातरौ । पुत्रश्च दुहिता च पुत्रौ ॥

नपुंसकमनपुंसकेनैकवच्चास्यान्यतरस्याम् ॥ १ । २ । ६९ ॥

नपुंसकलिङ्गवाची शब्द नपुंसकभिन्नवाची शब्द के साथ एक शेष पावे । और नपुंसक को एकवचन भी विकल्प करके हो । शुक्लश्च कम्बलः शुक्ला च बृहतिका शुक्लं च वस्त्रं तदिदं शुक्लम् । तानीमानि शुक्लानि । अनपुंसक के साथ इसलिये कहा है कि शुक्लं च शुक्लं च शुक्लं च शुक्लानि । यहां एक वचन न हो ॥

पिता मात्रा ॥ १ । २ । ७० ॥

मातृशब्द के साथ पितृशब्द विकल्प करके शेष रहे । माता च पिता च पितरौ । मातापितराविति वा ॥

श्वशुरः श्वश्र्वा ॥ १ । २ । ७१ ॥

श्वशुर शब्द श्वश्रू शब्द के साथ विकल्प करके शेष रहे । श्वश्रू च श्वशुरश्च श्वशुरौ । श्वश्रूश्वशुराविति वा ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्यदादीनि सर्वैर्नित्यम् ॥ २ । १ । ७२ ॥

यहां नित्य ग्रहण पूर्व विकल्प की निवृत्ति के लिये हैं त्यद् आदि शब्द सब शब्दों के साथ शेष रहैं। स च देवदत्तश्च तौ। यश्च देवदत्तश्च यौ। त्यदादीनां मिथो यद्यत्परं तच्छिष्यते। सच यश्च यौ। यश्च कश्च कौ॥

ग्राम्यपशुसंघेष्वतरुणेषु स्त्री ॥ २ । १ । ७३ ॥

ग्राम में रहने वाले पशुओं के समुदाय में स्त्रीवाची शब्द पुरुषवाची शब्द के साथ शेष रहैं। पुमान् स्त्रिया। इस सूत्र से पुरुषवाची शब्द का शेष पाया था उस का अपवाद यह सूत्र है। गहिषश्च गहिष्यश्च महिष्य इमाश्चरन्ति। गाव इमाश्चरन्ति। अजा इमाश्चरन्ति। ग्राम्यग्रहणं किम्। रुरव इमे। पृषता इमे। पशिष्विति किम्। ब्राह्मणाः। क्षत्रियः। संघेष्विति किम्। एतौ गावौ चरतः। अतरुणेष्विति किम्। वत्सा इमे। बर्करा इमे॥

वा०—अनेकशफेष्विति वक्तव्यम् ॥

अनेक शफ अर्थात् जिन पशुओं के खुर दो २ हों कि जैसे—गाय भैंस आदि उन्हीं में यह विधि हो। और यहां न होवे कि—अश्वा इमे। गर्दभा इमे। घोड़े और गधे के खुर जुड़े होते हैं। इस के आगे सामान्य सूत्रों को लिखते हैं जिन में एक समास का नियम नहीं है॥

प्रथमानिर्दिष्टं समासउपसर्जनम् ॥ १ । २ । ४३ ॥

समास विधायक सूत्रों में प्रथमा विभक्ति से जिस शब्द का उच्चारण किया हो वह उपसर्जन संज्ञक हो। द्वितीया समास में द्वितीया प्रथमानिर्दिष्ट और तृतीया समास में तृतीया प्रथमानिर्दिष्ट है। ऐसे ही और भी जानो। कष्टश्रितः। शङ्कुलया खण्डः॥

उपसर्जनं पूर्वम् ॥ २ । २ । ३० ॥

इस सूत्र से उपसर्जनसंज्ञक का पूर्व निपात होता है तथा अन्य भी उपसर्जनसंज्ञा के बहुत प्रयोजन हैं सो अपने २ प्रकरण में समझने चाहियें यहां समास में उन के लिखने की आवश्यकता नहीं॥

एकविभक्ति चापूर्वनिपाते ॥ १ । २ । ४४ ॥

जिस पद की समास विधायक सूत्र में एक ही विभक्ति नियत हो सो उपसर्जन-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संज्ञक हो । अपूर्वनिपाते । पूर्वनिपाताख्य जो उपसर्जन कार्य्य है उस को वार्जि के । निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्या । यहां जैसे-पञ्चम्यन्त ही पद का नियम है इसलिये उत्तरपद की उपसर्जनसंज्ञा होती है । निष्क्रान्तः कौशाम्ब्या निष्कौशाम्बिः । यहां उपसर्जनसंज्ञा का प्रयोजन यह है कि स्त्रीप्रत्यय को ह्रस्व हो जाता है । एक विभक्तीति किम् । राजकुमारी * । अपूर्वनिपात इति किम् । कौशाम्बीनिरिति । यहां कौशाम्बी की उपसर्जनसंज्ञा नहीं होती ॥

गोस्त्रियोरुपसर्जनस्य ॥ १ । २ । ४८ ॥

गो इति स्वरूपग्रहणं स्त्रीति प्रत्ययग्रहणं स्वरितत्वात् । इस का अर्थ यह है कि जो चतुर्थ अध्याय में 'स्त्रियाम्' इस अधिकार सूत्र करके प्रत्यय कहे हैं, उन का यहां ग्रहण है । स्त्री शब्दान्त प्रातिपदिक को और उपसर्जन स्त्रीप्रत्ययान्त प्रातिपदिक को ह्रस्व हो । चित्रगुः । शवलगुः । निष्कौशाम्बिः । निर्वाराणसिः । अतिखट्वः । अतिमालः । उपसर्जनस्येति किम् । राजकुमारी । स्वरितत्वात् किम् । अतितन्त्रीः । अतिलक्ष्मीः । अतिश्रीः ॥

कडाराः कर्मधारये ॥ २ । ३ । ३८ ॥

कर्मधारय समास में कडार शब्द का पूर्वनिपात विकल्प करके हो । जैसे—कडारजैमिनिः । जैमिनि कडारः । इत्यादि ✝ ॥

परवल्लिङ्गन्द्वन्द्वतत्पुरुषयोः २ । ४ । २६ ॥

द्वन्द्व और तत्पुरुष समास में परपद का लिङ्ग हो । द्वन्द्व । कुक्कुटमयूर्याविमे । मयूरीकुक्कुटाविमौ । तत्पुरुष । अर्द्धं पिप्पल्या अर्द्धपिप्पली । अर्द्धकौशातकी ॥

द्विगुप्राप्तापन्नालंपूर्वगतिसमासेषु प्रतिषेधो वक्तव्यः ॥

द्विगु । प्राप्त । आपन्न । अलंपूर्वक । तथा गतिसंज्ञक इन समासों में परपद का

---

* यहां एक विभक्ति का नियम इसलिये नहीं है कि जिस षष्ठ्यन्त की उपसर्जनसंज्ञा होती है उससे सब विभक्ति आती हैं । जैसे—राज्ञः कुमारी । राज्ञोः कुमार्यौ । राज्ञां कुमार्य्यः । इत्यादि ॥

✝ जो 'प्राक्कडारात्समासः' । इस सूत्र में समास का अधिकार किया था वह पूरा हो गया । अब इस के आगे समास में किस पद के लिंग का प्रयोग होना चाहिये इस का आरम्भ हुआ है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिङ्ग न हो। पञ्चसु कपालेषु संस्कृतः पुरोडाशः पञ्चकपालः। प्राप्तो जीविकाम् प्राप्तजीविकः। आपन्नो जीविकाम् आपन्नजीविकः। अलंपूर्वक। अलंजीविकायै अलंजीविकः। गतिसमास। निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः निष्कौशाम्बिः। निर्वाराणसिः ॥

अचतुर विचतुर सुचतुर स्त्रीपुंसधेन्वनडुहर्क्सामवाङ्मनसाक्षिभ्रुवदारगवोर्वष्ठीवपदष्ठीवनक्तंदिवरात्रिंदिवाहर्दिवसरजसनिश्श्रेयसपुरुषायुषद्व्यायुषत्र्यायुषर्ग्यजुषजातोक्षमहोक्षवृद्धोक्षोपशुनगोष्ठश्वाः

॥ ५ । ४ । ७७ ॥

ये २५ बहुव्रीहि आदि समासों में अच् प्रत्ययान्त निपातन किये हैं सो आदि में तीन बहुव्रीहि हैं। अविद्यमानानि चत्वारि सेनाङ्गानि यस्य सः अचतुरः। विगतानि चत्वारि यस्य सः विचतुरः। शोभनानि यस्य सः सुचतुरः। इससे आगे ११ (ग्यारह) द्वन्द्व समास में निपातन किये हैं। स्त्रीपुंसौ। धेन्वनडुहौ। ऋक्सामे। वाङ्मनसे। अक्षिभ्रुवम्। दाराश्च गावश्च दारगवम्। ऊरू च अष्ठीवन्तौ च ऊर्वष्ठीवम्। टि लोपो निपात्यते। पादौ चाष्ठीवन्तौ च। पदष्ठीवम्। नक्तं च दिवा च नक्तन्दिवम्। रात्रौ च दिवा च रात्रिन्दिवम्। पूर्वपदस्यमान्तत्वन्निपात्यते। अहनि च दिवा च अहर्दिवम्। वीप्सायान्द्वन्द्वो निपात्यते। अहन्यहनीत्यर्थः। एक अव्ययीभाव साकल्य अर्थ में है। सरजसमभ्यवहरति। इस से परे तत्पुरुष जानो। निश्चितं श्रेयो निश्श्रेयसम्। यहां से परे षष्ठी समास है। पुरुषस्य आयुः पुरुषायुषम्। इस से परे द्विगु है। द्वे आयुषी समाहृते द्व्यायुषम्। त्र्यायुषम्। इस से परे द्वन्द्व। ऋक् च यजुश्च ऋग्यजुषम्। आगे उक्ष शब्दान्त तीन कर्मधारय समास हैं। जातश्चासावुक्षा च जातोक्षः। महोक्षः। वृद्धोक्षः। इस से परे एक अव्ययीभाव समास है। शुनः समीपं उपशुनम्। इस से परे सप्तमी तत्पुरुष समास है। गोष्ठे श्वा गोष्ठश्वः। जिस २ समास में जो २ निपातन किये हैं वे उसी २ समास में निपातन जानने चाहियें ॥

वा०—चतुरोऽच् प्रकरणे त्र्युपाभ्यामुपसंख्यानम् ॥

त्रि और उपशब्द से परे जो चतुर शब्द उस से समासान्त अच् प्रत्यय हो। जैसे—त्रिचतुराः। उपचतुराः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीये चाऽनुपाख्ये ॥ ६ । ३ । ८० ॥

जो प्रत्यक्ष जाना जाय सो उपाख्य और जो इस से भिन्न है सो कहिये अनुपाख्य अर्थात् अनुमेय है, जहां द्वितीय अनुपाख्य हो वहां सह शब्द को स आदेश हो। सबुद्धिः । साग्निः कपोतः । सपिशाचा वात्या । सराक्षसीका शाला । यहां अग्नि आदि साक्षात् नहीं होते किंतु अनुमानगम्य हैं ॥

ज्योतिर्जनपदरात्रिनाभिनामगोत्ररूपस्थानवर्णवयोवचनबन्धुषु ॥ ६ । ३ । ८५ ॥

ज्योतिष्, जनपद, रात्रि, नाभि, नाम, गोत्र रूप, स्थान, वर्ण, वयस्, वचन और बन्धु ये उत्तरपद परे होवें तो समान को स आदेश हो। समानं च तज्ज्योतिश्च सज्योतिः । समानं ज्योतिर्यस्मिन् स सज्योतिर्व्यवहारः । सजनपदः । सरात्रिः । सनाभिः । सनामा । सगोत्रः । सरूपः । सस्थानः । सवर्णः । सवयाः । सवचनः । सबन्धुः ॥

चरणे ब्रह्मचारिणि ॥ ६ । ३ । ८६ ॥

आचरण अर्थ में ब्रह्मचारी उत्तरपद परे हो तो समान शब्द को स आदेश हो। समानो ब्रह्मचारी सब्रह्मचारी । जो एकवेद पढ़ने और आचार्य्य के समीप व्रत को धारण करता है वह सब्रह्मचारी कहाता है ॥

इदं किमोरीश्की ॥ ६ । ३ । ९० ॥

जो दृक् दृश् और वतु परे हों तो इदम् और किम् शब्द को ईश् और की आदेश हों। ईदृक् । ईदृशः । इयान् । कीदृक् । कीदृशः । कियान् ॥

वा०—दृक्षे चेति वक्तव्यम् ॥

दृक्ष उत्तरपद के परे भी इदं और किम् शब्द को ईश् और की आदेश हो जावें । जैसे–ईदृक्षः । कीदृक्षः ॥

विश्वग्देवयोश्च टेरद्र्यञ्चतावप्रत्यये ॥ ६ । ३ । ९२ ॥

जो अप्रत्यय अर्थात् क्विप् तथा विच् प्रत्ययान्त अञ्चति परे हो तो विश्वग्, देव और सर्वनाम की टि को अद्रि आदेश हो। विश्वगञ्चतीति विश्वद्र्यङ् । देवद्र्यङ् । सर्वनाम । तद्र्यङ् । यद्र्यङ् । विश्वग्देवयोरिति किम् । विश्वाची । अप्रत्यय इति किम् । विश्वगञ्चनम् ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा०—छन्दसि स्त्रियां बहुलमिति वक्तव्यम् ॥

वेद विषयक स्त्रीलिंग में विश्वग् आदि की टि को अद्रि आदेश बहुल करके हो। जैसे—विश्वाची च घृताची चेत्यत्र न भवति। कद्रीचीत्यत्र तु भवत्येव ॥

समः समि ॥ ६ । ३ । ९३ ॥

जो अप्रत्ययान्त अञ्चति परे हो तो सम् के स्थान में समि आदेश हो सम्यक्। सम्यञ्चौ। सम्यञ्चः ॥

तिरसस्तिर्यलोपे ॥ ६ । ३ । ९४ ॥

अप्रत्ययान्त लोप रहित अञ्चति उत्तरपद परे हो तो तिरस् के स्थान में तिरि आदेश हो। तिर्यङ्। तिर्य्यञ्चौ। तिर्य्यञ्चः। अलोप इति किम्। तिरश्चै। तिरश्चे ॥

सहस्य सध्रिः ॥ ६ । ३ । ९५ ॥

जो अप्रत्ययान्त अञ्चति उत्तरपद परे हो तो सह शब्द को सध्रि आदेश हो। सध्र्यङ्। सध्र्यञ्चौ। सध्र्यञ्चः ॥

सध मादस्थयोश्छन्दसि ॥ ६ । ३ । ९६ ॥

वेद विषय में माद और स्थ उत्तरपद परे हों तो सह के स्थान में सध आदेश हो। सधमादो द्युम्न एकास्ताः। सधस्थाः ॥

द्व्यन्तरुपसर्गेभ्योऽपईत् ॥ ६ । ३ । ९७ ॥

द्वि अन्तर और उपसर्गों से परे अप् शब्द के आदि अच्' के स्थान में ईत् आदेश होता है। द्वयोः पार्श्वयोरापो यस्मिन्नगरे तद्द्वीपम्। अन्तर्मध्ये आपो यस्मिन्प्रागे सोऽन्तरीपः। अभिगता आपोऽस्मिन्सोऽभीपो ग्रामः। इत्यादि * ॥

ऊदनोर्देशे ॥ ६ । ३ । ९८ ॥

देश अर्थ में अनु उपसर्ग से परे अप् शब्द के अकार को ऊकार आदेश हो। अनूपो देशः। देश इति किम्। अन्वीपम् ॥

अषष्ठ्यतृतीयास्थस्यान्यस्यदुगाशीराशास्थास्थितोत्सुकोतिकारकरागच्छेषु ॥ ६ । ३ । ९९ ॥

* 'आदेः परस्य' इस से अप् शब्द के अकार के स्थान में ईत् आदेश होता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो आशिष् । आशा । आस्था । आस्थित । उत्सुक । ऊति । कारक । राग और छ प्रत्यय परे हों तो जो षष्ठी तृतीया विभक्तिरहित अन्य शब्द उस को दुक् का आगम हो । अन्या आशीः अन्यदाशीः । अन्या आशा । अन्यदाशा । अन्या आस्था अन्यदास्था । अन्य आस्थितः अन्यदास्थितः । अन्य उत्सुकः अन्यदुत्सुकः । अन्या ऊतिः अन्यदूतिः । अन्यः कारकः अन्यत्कारकः । अन्योरागः अन्यद्रागः । अन्यस्मिन् भवः । अन्यदीयः । गहादिष्वन्य शब्दो द्रष्टव्यः । अषष्ठ्यतृतीयास्थस्येति किम् । अन्यस्य आशीः अन्याशीः । अन्येन आस्थितः । अन्यास्थितः ॥

अर्थे विभाषा ॥ ६ । ३ । १०० ॥

अर्थ उत्तरपद परे हो तो अन्य शब्द को दुक् का आगम विकल्प करके हो । अन्योर्थः अन्यदर्थः । पक्षे अन्यार्थः ॥

कोः कत्तत्पुरुषेऽचि ॥ ६ । ३ । १०१ ॥

जो अजादि उत्तरपद परे और तत्पुरुष समास हो तो कु शब्द के स्थान में कत् आदेश हो । कदजः । कदश्वः । कदुष्ट्रः । कदन्नम् । इत्यादि । तत्पुरुष इति किम् । कूष्ट्रो राजा । अचीति किम् । कुब्राह्मणः । कुपुरुषः ॥

वा०—कद्भावे त्रावुपसंख्यानम् ॥

जो कु शब्द को कत् आदेश कहा है सो त्रि शब्द के परे भी होवे । कुत्सितास्त्रयः । कत्त्रयः ॥

रथवदयोश्च ॥ ६ । ३ । १०२ ॥

रथ और वद उत्तरपद परे हों तो कुशब्द को कत् आदेश हो । कद्रथः । कद्वदः ॥

तृणे च जातौ ॥ ६ । ३ । १०३ ॥

जाति अर्थ में तृण उत्तरपद परे हो तो कु के स्थान में कत् आदेश हो । कत्तृणा नाम जातिः । जाताविति किम् । कुत्सितानि तृणानि कुतृणानि ॥

का पथ्यक्षयोः ॥ ६ । ३ । १०४ ॥

पथिन् और अक्ष उत्तरपद परे हों तो कुशब्द को का आदेश हो । कुत्सितः पन्थाः कापथः । काक्षः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईषदर्थे ॥ ६ । ३ । १०५ ॥

किंचित् अर्थ में वर्त्तमान कुशब्द को उत्तरपद परे हो तो का आदेश हो । ईषल्लवणम् । कालवणम् । कामधुरम् । काऽम्लम् । ईषदुष्णम् । कोष्णम् ॥

विभाषा पुरुषे ॥ ६ । ३ । १०६ ॥

पुरुष उत्तरपद परे हो तो कुशब्द को का आदेश विकल्प करके हो । कुत्सितः पुरुषः कापुरुषः । कुपुरुषः ॥

कवं चोष्णे ॥ ६ । ३ । १०७ ॥

उष्ण उत्तरपद परे हो तो कुशब्द को कव आदेश विकल्प करके हो पक्ष में का हो । ईषदुष्णम् । कवोष्णम् । कोष्णम् । कदुष्णम् ॥

पथि च छन्दसि ॥ ६ । ३ । १०८ ॥

वेद में पथिन् उत्तरपद परे हो तो कुशब्द को कव आदेश हो । पक्ष में विकल्प करके का भी हो । कवपथः । कापथः । कुपथः ॥

पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम् ॥ ६ । ३ । १०९ ॥

जिन शब्दों में लोप आगम और वर्णविकार किसी सूत्र से विधान न किये हों और वे शिष्ट पुरुषों ने उच्चारण किये हैं तो वैसे ही उन शब्दों को जानना चाहिये *। पृषदुदरमस्य पृषोदरम् । पृषत् उद्वानम् पृषोद्वानम् । यहां तकार का लोप है । वारिवाहको बलाहकः । यहां वारि शब्द को व आदेश है । तथा वाहक पद के आदि को ल आदेश जानो । जीवनस्य मूतो जीमूतः । यहां वन शब्द का लोप है । शवानां शयनम् श्मशानम् । शव शब्द को श्म आदेश और शयन के स्थान में शान जानो । ऊर्ध्वं खमस्येति ऊखलम् । यहां ऊर्ध्व को ऊ तथा खशब्द को खल आदेश जानना चाहिये । पिशिताशः पिशाचः । यहां पिशि को पि और ताश के स्थान में शाच आदेश है । ब्रुवन्तोऽस्यां सीदन्तीति बृसी । सदधातु से अधिकरण में डट् प्रत्यय और उपपद ब्रुवत् शब्द को बृ आदेश हो जाता है । मह्यां रौतीति मयूरः । अच्

* यह सूत्र अन्य सब साधुत्व कारक सूत्रों के विषयों को छोड़ के बाकी विषय में प्रवृत्त होता है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्यय के परे रुधातु के टि का लोप और मही शब्द को मयू आदेश होजाता है इसी प्रकार और भी अश्वत्थ, कपित्थ आदि शब्दों की सिद्धि समझनी चाहिये ॥

वा० दिक्शब्देभ्य उत्तरस्य तीरशब्दस्य तारभावो वा भवति ॥

दिशावाची शब्दों से परे तीरशब्द को तार आदेश विकल्प करके हो दक्षिणतीरम् । दक्षिणतारम् । उत्तरतीरम् । उत्तरतारम् ॥

वा०—वाचो वादे डत्वं च लभावश्चोत्तरपदस्येञि प्रत्यय भवति ॥

वाद उत्तरपद के परे वाक् शब्द को ड आदेश और इञ् प्रत्यय के परे उत्तर वाद शब्द को ल आदेश हो जावे । वाचं वदतीति वाग्वादः । तस्यापत्यं वाडबालिः ॥

वा० – षषउत्वं दतृदशधासूत्तरपदादेष्टुत्वं च भवति ॥

षट्शब्द को उ हो दतृ, दश और धा उत्तरपद परे हों तो और उत्तरपद के आदि को मूर्द्धन्य आदेश हो । षड्दन्ता अस्य षोडन् । षट् च दश च षोडश ॥

वा०—धासु वा षषउत्वं भवति उत्तरपदादेश्च ष्टुत्वम् ॥

पूर्वोक्त कार्य्य धा उत्तरपद में विकल्प करके हो । षोढा । षड्धा कुरु ॥

वा०—दुरो दाशनाशदभध्येषूत्वं वक्तव्यमुत्तरपदादेश्च ष्टुत्वम् ॥

दुर् शब्द को उत्व हो दाश नाश दभ और ध्य ये उत्तरपद परे हों तो और उत्तरपदों के आदि को मूर्द्धन्य आदेश हो । कृच्छ्रेण दाश्यते । नाश्यते । दभ्यते । च यः स दूडाशः । दूणाशः । दूडभः । दुष्टं ध्यायतीति । दूढ्यः । इत्यादि । वर्णागमो वर्णविपर्ययश्च द्वौ चापरौ वर्णविकारनाशौ । धातोस्तदर्थातिशयेन योगस्तदुच्यते पञ्चविधं निरुक्तम् ॥ १ ॥

संहितायाम् ॥ ६ । ३ । ११४ ॥

अब जो कार्य्य कहेंगे सो संहिता के विषय में होंगे अर्थात् यह अधिकार सूत्र है ॥

कर्णे लक्षणस्याविष्टाष्टपञ्चमणिभिन्नछिन्नछिद्रस्रुवस्वस्तिकस्य ॥ ६ । ३ । ११५ ॥

विष्ट । अष्ट । पञ्च । मणि । भिन्न । छिन्न । छिद्र । स्रुव । स्वस्तिक । इन नव

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्दों को छोड़ के कर्ण शब्द उत्तरपद परे हो तो लक्षणवाचि पूर्वपद को दीर्घ आदेश हो संहिता विषय में। दात्रमिव कर्णावस्य दात्राकर्णः। द्विगुणाकर्णः। त्रिगुणाकर्णः। द्व्यङ्गुलाकर्णः। त्र्यङ्गुलाकर्णः। यत् पशूनां स्वामिविशेषसम्बन्धज्ञापनार्थं दात्राकारादि क्रियते। तदिह लक्षणं गृह्यते। लक्षणस्येति किम्। शोभनकर्णः। अविष्टादीनामिति किम्। विष्टकर्णः। अष्टकर्णः। पञ्चकर्णः। मणिकर्णः। भिन्नकर्णः। छिन्नकर्णः। छिद्रकर्णः। स्रुवकर्णः। स्वस्तिककर्णः॥

नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ॥ ६। ३। ११६॥

जो ये नह आदि धातु क्विप् प्रत्ययान्त उत्तरपद परे हों तो संहिता विषय में पूर्वपद को दीर्घादेश हो। उपानत्। परीणत्। नीवृत्। उपावृत्। प्रावृट्। उपावृट्। मर्मावित्। हृदयावित्। श्वावित्। नीरुक्। अभीरुक्। ऋतीषट्। तरीतत्। क्वाविति किम्। परिणहनम्॥

वनगिर्य्योः संज्ञायां कोटरकिंशुलकादीनाम्॥ ६। ३। ११७॥

संज्ञा विषय में वन उत्तरपद परे हो तो कोटर आदि और गिरि परे हो तो किंशुलक आदि पूर्वपदों को दीर्घ आदेश हो। कोटरावणम्। मिश्रकावणम्। सिध्रकावणम्। सारिकावणम्। किंशुलकागिरिः। अञ्जनागिरिः। कोटरकिंशुलकादीनामिति किम्। असिपत्रवनम्। कृष्णागिरिः॥

अष्टनः संज्ञायाम्॥ ६। ३। १२५॥

अष्टन् पूर्वपद को दीर्घ आदेश हो संज्ञा विषय में। अष्टावक्रः। अष्टाबन्धुरः। अष्टापदम्। संज्ञायामिति किम्। अष्टपुत्रः। अष्टबन्धुः॥

छन्दसि च॥ ६। ३। १२६॥

वेद विषय में अष्टन् पूर्वपद को उत्तरपद परे हो तो दीर्घ आदेश हो। आग्नेयमष्टाकपालं निर्वपेत्। अष्टाहिरण्या दक्षिणा। अष्टापदं सुवर्णम्॥

वा०—गवि च युक्ते भाषायामष्टनो दीर्घो भवतीति वक्तव्यम्॥

लौकिक प्रयोग विषय में युक्त गोशब्द उत्तरपद परे हो तो अष्टन् पूर्वपद को दीर्घ हो जावे। जैसे—अष्टागवं शकटम्॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चितेःकपि ॥ ६ । ३ । १२७ ॥

कप् प्रत्यय परे हो तो चिति पद को दीर्घ आदेश हो । द्विचितीकः । त्रिचितीकः ॥

विश्वस्य वसुराटोः ॥ ६ । ३ । १२८ ॥

वसु और राट् उत्तरपद परे हों तो विश्व पूर्वपद को दीर्घ आदेश हो । विश्वावसुः । विश्वाराट् ॥

नरे संज्ञायाम् ॥ ६ । ३ । १२६ ॥

संज्ञा विषय में जो नर उत्तरपद परे हो तो विश्व पूर्वपद को दीर्घ हो । विश्वानरो नाम तस्य वैश्वानरिः पुत्रः । संज्ञायामिति किम् । विश्वे नरा यस्य स विश्वनरः ॥

मित्रे चर्षौ ॥ ६ । ३ । १३० ॥

ऋषि अर्थ में मित्र उत्तरपद परे हो तो विश्व पूर्वपद को दीर्घ आदेश हो ॥ विश्वामित्रो नाम ऋषिः । ऋषाविति किम् । विश्वमित्रो माणवकः ॥

सर्वस्य द्वे ॥ ८ । १ । १ ॥

सब शब्दों के दो २ रूप होंवे । यह अधिकार सूत्र है ॥

तस्य परमाम्रेडितम् ॥ ८ । १ । २ ॥

दो भागों का जो पर रूप है सो आम्रेडितसंज्ञक हो । चौर चौर ३ । दस्यो दस्यो ३ । घातयिष्यामि त्वा । बन्धयिष्यामि त्वा ॥

अनुदात्तं च ॥ ८ । १ । ३ ॥

जो द्वित्व हो सो अनुदात्तसंज्ञक भी हो ॥

नित्यवीप्सयोः ॥ ८ । १ । ४ ॥

नित्य और वीप्सा अर्थ में वर्त्तमान जो शब्द उसको द्वित्व हो । तिङ् अव्यय और कृत् इन में तो नित्य होता है । तथा सुप् में वीप्सा होती है । व्याप्तुमिच्छा वीप्सा । पचति पचति । पठति पठति । जल्पति २ । भुक्त्वा २ व्रजति । भोजं २ व्रजति । लुनीहि लुनीहीत्येवायं लुनाति । वीप्सा । ग्रामो २ रमणीयः । जनपदो २ रमणीयः । पुरुषः पुरुषो निधनमुपैति ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परेर्वर्जने ॥ ८ । १ । ५ ॥

वर्जन अर्थ में जो परि हो तो उस को द्वित्व हो । परि २ त्रिगर्त्तेभ्यो वृष्टो देवः । परि २ सौवीरेभ्यः । वर्जन इति किम् । ओदनं परिषिञ्चति ॥

वा०---परेर्वर्जनेऽसमासे वेति वक्तव्यम् ॥

असमास * अर्थात् जिस पक्ष में समास नहीं होता वहां विकल्प करके द्विर्वचन हो । परि २ त्रिगर्त्तेभ्यो वृष्टोदेवः । परित्रिगर्त्तेभ्यः ॥

प्रसमुपोदः पादपूरणे ॥ ८ । १ । ६ ॥

पाद पूरा करना ही अर्थ होतो प्र सम् उप उद् इन को द्वित्व हो । प्रप्रायमग्निभ-रतस्य शृण्वे । संसमिद्युवसे वृषन् । उपोपमे परामृश । किन्नोदुदुहर्षसे दातवाउ ॥

उपर्य्यध्यधसः सामीप्ये ॥ ८ । १ । ७ ॥

उपरि अधि और अधस् इन को द्वित्व हो समीप अर्थ में । उपर्य्युपरि दुःखम् । उपर्य्युपरिग्रामम् । अध्यधिग्रामम् । अधोधोवनम् । सामीप्य इति किम् । उपरिचन्द्रमाः ।

वाक्यादेरामन्त्रितस्यासूयासंमतिकोपकुत्सनभर्त्सनेषु ॥ ८ । १ । ८ ॥

असूया आदि अर्थों में जो वाक्य उस का आदि जो आमन्त्रित पद उस को द्वित्व हो (असूया) और के गुणों को न सहना (सम्मति) सत्कार (कोप) क्रोध (कुत्सन) निन्दा (भर्त्सन) ‡ धमकाना (असूया) माणवक ३ माणवक अभिरूपक ३ अभिरूपक रिक्तन्ते आभिरूप्यम् । (संमति) माणवक ३ माणवक अभिरूपक ३ अभिरूपक शोभनः खल्वसि (कोप) देवदत्त ३ देवदत्त अविनीतक ३ अविनीतक संप्रति वेत्स्यसि दुष्ट (कुत्सन) शक्तिके ३ शक्तिके यष्टिके ३ यष्टिके रिक्ताते शक्तिः (भर्त्सन) चौर चौर ३ वृषल वृषल ३ घातयिष्यामि त्वा बन्धयिष्यामि त्वा । वाक्यादेरिति किम् । अन्तस्य मध्यस्य च माभूत् । शोभनः खल्वसि माणवक । आमन्त्रितस्येति किम् । उदारो देवदत्तः । असूयादिष्विति किम् । देवदत्त गामभ्याज शुक्लाम् ॥

---

*अव्ययीभाव समास का विकल्प "विभाषा" अधिकार में (अपपरि०)इस सूत्र से होजाता है ॥

‡ कोप और भर्त्सन में इतना भेद है कि कोप में अन्तःकरण से दूसरे को दुःख देना चाहता है और भर्त्सन में ऊपर ही का तेजमात्र दिखाया जाता है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकं बहुव्रीहिवत् ॥ ८ । १ । ९ ॥

द्वित्व का जो एक शब्दरूप है उस को बहुव्रीहि के समान कार्य्य हो बहुव्रीहि के दो प्रयोजन हैं । सुब्लोप और पुंवद्भाव । एकैकमक्षरं वदन्ति । एकैकयाऽऽहुत्या जुहोति । एकैकस्मै * । देहि ॥

आबाधे च ॥ ८ । १ । १० ॥

आबाध नाम पीड़ा अर्थ में वर्त्तमान शब्द को द्वित्व हो । और बहुव्रीहि के समान कार्य्य हो । गतगतः । नष्टनष्टः । पतितपतितः । प्रियस्य चिरगमनादिना पीड्यमानः कश्चिदेवं प्रयुङ्क्ते प्रयोक्ता ॥

कर्मधारयवदुत्तरेषु ॥ ८ । १ । ११ ॥

यहां से आगे जो द्वित्व कहेंगे वहां कर्मधारय के तुल्य कार्य्य होगा । कर्मधारयवत् कहने से तीन प्रयोजन हैं । सुब्लोप । पुंवद्भाव और अन्तोदात्त । सुब्लोप । पटुपटुः । मृदुमृदुः । पण्डितपण्डितः । पुंवद्भाव । पटुपट्वी । मृदुमृद्वी । कालिककालिका । अन्तोदात्त । पटुपटुः । पटुपट्वी ॥

प्रकारे गुणवचनस्य ॥ ८ । १ । १२ ॥

प्रकार नाम सादृश्य अर्थ में वर्त्तमान शब्द को द्वित्व हो । पटु २ । पण्डित २ । प्रकारवचन इति किम् । पटुर्देवदत्तः । गुणवचनस्येति किम् । अग्निर्माणवकः ॥

वा०—आनुपूर्व्ये द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥

मूले २ स्थूलाः । अग्रे २ सूक्ष्माः । ज्येष्ठम् २ प्रवेशय ॥

वा०—स्वार्थेऽवधार्य्यमाणेऽनेकस्मिन् द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥

अस्मात् कार्षापणादिह भवद्भ्यां माषं २ देहि । अवधार्य्यमाण इति किम् । अस्मात् कार्षापणादिह भवद्भ्यां माषमेकं देहि द्वौ माषौ देहि । त्रीन् वा माषान् देहि । अनेकस्मिन् इति किम् । अस्मात् कार्षापणादिह भवद्भ्यां माषमेकं देहि ॥

वा०—चापले द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥

---

* बहुव्रीहि समास में सर्वनाम संज्ञा का निषेध किया है सो वह निषेध यहां इस लिये नहीं लगता कि जो मुख्य करके बहुव्रीहि हो वहीं निषेध हो यह मुख्य नहीं है ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संभ्रमेण प्रवृत्तिश्चापलम् । अहिरहिर्बुध्यस्व २ । नावश्यं द्वावेव शब्दौ प्रयोक्तव्यौ । किं तर्हि यावद्भिः शब्दैः सोऽर्थोऽवगम्यते तावन्तः प्रयोक्तव्याः । अहिः ३ बुध्यस्व ३ ॥

वा०—आभीक्ष्ण्ये द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥

भुक्त्वा भुक्त्वा व्रजति । भोजं भोजं व्रजति ॥

क्रियासमभिहारे द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥

स भवान् लुनीहि लुनीहीत्येवायं लुनाति ॥

वा०—डाचि बहुलं द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥

पटपटा करोति । पटपटायते ॥

वा०—पूर्वप्रथमयोरर्थातिशये विवक्षायां द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥

पूर्वं २ पुष्यन्ति । प्रथमं २ पच्यन्ते ॥

वा०—डतरडतमयोः समसंप्रधारणायोः स्त्रीनिगदे भावे द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥

उभाविमावाढ्यौ । कतरा कतरा अनयोराढ्यता । सर्वे इमे आढ्याः । कतमा कतमा एषामाढ्यता । डतरडतमाभ्यामन्यत्रापि हि दृश्यते । उभाविमावाढ्यौ । कीदृशी कीदृशी अनयोराढ्यता तथा स्त्रीनिगदाद् भावादन्यत्रापि हि दृश्यते उभाविमावाढ्यौ । कतरः कतरोऽनयोर्विभव इति ॥

वा०—कर्मव्यतिहारे सर्वनाम्नो द्वे भवत इति वक्तव्यम् ॥

समासवच्च बहुलम् । यदा न समासवत् प्रथमैकवचनं तदा पूर्वपदस्य । अन्यमन्यमिमे ब्राह्मणा भोजयन्ति । अन्योन्यामिमे ब्राह्मणा भोजयन्ति । अन्योन्यस्येमे ब्राह्मणा भोजयन्ति इतरेतरान् भोजयन्ति ॥

वा० स्त्रीनपुंसकयोरुत्तरपदस्य चाम्भावो वक्तव्यः ॥

अन्योन्यामिमे ब्राह्मण्यौ भोजयतः । अन्यान्यम्भोजयतः । इतरेतराम्भोजयतः । इतरेतरम्भोजयतः । अन्योन्यमिमे ब्राह्मणकुले भोजयतः । इतरेतरमिमे ब्राह्मणकुले भोजयतः ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वन्द्वं रहस्यमर्यादावचनव्युत्क्रमणयज्ञपात्रप्रयोगा-भिव्यक्तिषु ॥ ८ । १ । १५ ॥

द्वन्द्व यहां द्वि शब्द को द्वित्व तथा पूर्वपद को अम्भाव और उत्तरपद को अकार आदेश निपातन किया है रहस्य, मर्यादावचन, व्युत्क्रमण, यज्ञपात्रप्रयोग, और अभिव्यक्ति इन अर्थों में (रहस्य) द्वन्द्वं मन्त्रयते द्वन्द्वं मिथुनायन्ते * (मर्यादावचन) आचतुरं हीमे पशवो द्वन्द्वं मिथुनायन्ते । माता पुत्रेण मिथुनं गच्छति । पौत्रेण तत्पुत्रेणापीति (व्युत्क्रमण) द्वन्द्वं व्युत्क्रान्ताः । द्विवर्गसम्बन्धात्पृथगवस्थिता इत्यर्थः (यज्ञपात्रप्रयोग) द्वन्द्वं यज्ञपात्राणि प्रयुनक्ति धीरः (अभिव्यक्ति) द्वन्द्वं नारदपर्वतौ । द्वन्द्वं संकर्षणवासुदेवौ । द्वावप्यभिव्यक्तौ साहचर्य्येणेत्यर्थः ॥

वसुकालाङ्कभूवर्षे भाद्रमास्यसिते दले ।
द्वादश्यां रविवारेऽयं सामासिकः पूर्णोऽनघाः ॥

इति श्रीमत्परिव्राजकाचार्य्येण श्रीयुतयतिवर महाविद्वद्भिः

श्रीविरजानन्दसरस्वतीस्वामिभिः सुशिक्षितेन

दयानन्दसरस्वतीस्वामिना निर्मितः

पाणिनीयव्याख्ययासुभूषितः

सामासिकोऽयं ग्रन्थः

पूर्त्तिमगमत् ॥

* राजा और मुख्यसभासद् एकान्त में विचार और विवाहित स्त्रीपुरुष ऋतुकाल में समागम करें ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म् ॥

सस्ता ! सस्ता !! बहुत ही सस्ता !!!

ऋग्वेदभाष्य और यजुर्वेदभाष्य

(ऋग्वेदभाष्य सम्पूर्ण)

महर्षि श्री १०८ श्री स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी कृत ऋग्वेदभाष्य जो प्रारम्भ में ९०॥।~)॥ में और ता० २४ अप्रेल ०७ तक ३६) में बेचा जाता था उसी भाष्य के सर्व साधारण में वेदों का प्रचार बढ़ाने के लिये श्रीमती परोपकारिणीसभा ने ता० २५ अप्रेल ०७ से केवल २०) मात्र कर दिये तिस पर भी २०) सैकड़ा कमीशन काट कर केवल १६) **में बिक रहा है ।**

नोट—ऋग्वेद का भाष्य सातवें मण्डल के पांचवें अष्टक के पांचवें अध्याय से तीसरे वर्ग के दूसरे मंत्र तक महर्षि श्री १०८ श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज ने किया था इसलिये यहांतक तो भाष्यसहित छपा है इस के आगे का भाग २९० पृष्ठों में मूल मन्त्र छाप के पुस्तक पूर्ण की गई है सो आगे का मूलमन्त्र भाग केवल १) में मिलेगा अंत के मूलमन्त्र भागसहित ऋग्वेदभाष्य की सम्पूर्ण पुस्तक के ८८४६ पृष्ठ हैं जिन के २१) मात्र हैं जो कमीशन काट कर १६॥।~) **में बिक रहा है ।**

(यजुर्वेद भाष्य सम्पूर्ण)

महर्षि श्री १०८ श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीजी कृत यजुर्वेदभाष्य सम्पूर्ण जो प्रारम्भ में ३९) में और ता० २४ अप्रैल ०७ तक १६) में बेचा जाता था उसी भाष्य के सर्व्व साधारण के लाभार्थ श्रीमती परोपकारिणीसभा ने ता० २५ अप्रैल ०७ से केवल १०) कर दिये जो कमीशन काटकर केवल ८) **में बिक रहा है ।**

निम्नलिखित पते से बाहर मँगानेवाले ग्राहकों को डाकमहसूलादि का खर्चा उपरोक्त दोनों भाष्यों के मूल्य से पृथक् देना पड़ेगा । उपरोक्त भाष्यों के मंगानेवाले ग्राहकों को आर्डर भेजने के साथ ही निकट के रेलवे स्टेशन का नाम भी लिखदेना चाहिये कि जिससे भेजने में विलम्ब न हो अब बहुत ही थोड़ी प्रतियें शेष रही हैं इसलिये आर्डर भेजने में विलम्ब न करना चाहिये ।

मैनेजर

वैदिक पुस्तकालय अजमेर.

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञापन ॥

पहिले कमीशन में पुस्तकें मिलती थीं अब नक़द रुपया मिलेगा ॥
डाक महसूल सब का मूल्य से अलग देना होगा ॥

विक्रयार्थ पुस्तकें	मूल्य
ऋग्वेदभाष्य (६ भाग)	२०)
यजुर्वेदभाष्य सम्पूर्ण	१०)
ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका	१।)
वेदाङ्गप्रकाश १४ भाग	४।≡)॥।
अष्टाध्यायी मूल	≡)॥
पञ्चमहायज्ञविधि	-)॥
,, बढ़िया	=)
निरुक्त	॥=)
शतपथ (१ काण्ड)	।)
संस्कृतवाक्यप्रबोध	=)
व्यवहारभानु	=)
भ्रमोच्छेदन	)॥।
अनुभ्रमोच्छेदन	)॥।
सत्यधर्मविचार(मेलाचांदापुर)नागरी	-)
,, ,, उर्दू	-)
आर्य्योद्देश्यरत्नमाला (नागरी)	)।
,, (मरहठी)	-)
,, (अंग्रेज़ी)	)॥।
गोकरुणानिधि	-)
स्वामीनारायणमतखण्डन	-)॥
हवनमन्त्र	)।
आर्य्याभिविनय बड़े अक्षरों का	।=)
सत्यार्थप्रकाश नागरी	१)

विक्रयार्थ पुस्तकें	मूल्य
सत्यार्थप्रकाश (बंगला)	१
संस्कारविधि	॥
,, बढ़िया	॥=
विवाहपद्धति	।
आर्याभिविनय गुटका	≡
शास्त्रार्थ फ़ीरोज़ाबाद	-)
आ० स० के नियमोपनियम	)
वेदविरुद्धमतखण्डन	=
वेदान्तिध्वान्तनिवारण नागरी	)॥
,, अंग्रेज़ी	-
भ्रान्तिनिवारण	-
शास्त्रार्थकाशी	)॥
स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश नागरी	)।
तथा अंग्रेज़ी	)
मूलवेद साधारण	५
तथा बढ़िया	५॥
अनुक्रमणिका	१॥
शतपथब्राह्मण पूरा	४
ईशादिदशोपनिषद् मूल	॥=
छान्दोग्योपनिषद् का संस्कृत तथा हिन्दी भाष्य	३)
यजुर्वेदभाषाभाष्य	२)

पुस्तक मिलने का पता--
प्रबन्धकर्त्ता
वैदिकपुस्तकालय अजमेर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

पुस्तक वितरण की तिथि नीचे अङ्कित है । इस तिथि सहित १५ वें दिन तक यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए अन्यथा ६ नये पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा ।

ARCHIVES DATA BASE
2011 - 12

Entered in Database

Signature with Date

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय,
हरिद्वार ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar